राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरा भाग

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

राधास्वामी गाय कर, जनम सुफल कर ले
यही नाम निज नाम है, मन अपने धर ले

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरी जिल्द

जिसको

परम संत सतगुरु हुज़ूर महाराज ने
ज़बान-ए-मुबारक से फ़रमाया

राधास्वामी मौज से प्रेम पत्र जारी।
दृढ़ विश्वास होय चरन में और प्रीत गाढ़ी॥
सुमिरन ध्यान और भजन में नित नया आनंद पाय।
सतसंगी सब उमँग उमँग राधास्वामी महिमा गाय॥

प्रकाशक
राधास्वामी ट्रस्ट
स्वामी बाग़, आगरा-२८२००५

प्रकाशक :

राधास्वामी ट्रस्ट
स्वामीबाग़, आगरा-२८२ ००५

सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

छटवीं बार १००० सन् १९८६ ई०
सातवीं बार ३००० सन् १९९२ ई०

मूल्य :
अजिल्द : २८.०० 37/50
सजिल्द : ३१.५० /

मुद्रक :
सुरेन्द्रभाई शाह
पारिजात प्रिन्टरी
२८८/१, रानीप-अहमदाबाद-३८२ ४८०

राधास्वामी सहाय

प्रेमपत्र दूसरा भाग जो कि १ मई सन् १८९४ ई० से ३० एप्रिल सन् १८९५ ई० तक खतम हुआ, उसके

बचनों के सूचीपत्र

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मजमून बचन	नम्बर सफ़ा
१	राधास्वामी मत वालों का बरताव अपने मन और इन्द्रियों के साथ	१५
२	राधास्वामी मत वालों का बरताव साथ अपने कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी के	२१
३	राधास्वामी मत में जो हुक्म दिये हैं उनके मानने के वास्ते जुगत भी बताई है । और मतों में यह बात बहुत कम पाई जाती है	२६
४	होशियार करना राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, वास्ते सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों के, और दुरुस्ती से करने अभ्यास के, अपने अन्तर में	३७
५	राधास्वामी मत में जो गुरु-भक्ति जारी है, उस पर तान मारने वालों को जबाब, और वर्णन इस बात का कि सच्चे परमार्थ और सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिए अपने समय के भेदी और अभ्यासी, मनुष्य-स्वरूप गुरु से मिलना और उनके साथ दीनता और भाव और प्यार करना बहुत ज़रूर है	५५
	अर्थ शब्द नम्बर २३, बचन ४१, पोथी सार बचन छंद बंद "गूंगे ने गुड़ खाइया"	७०
६	राधास्वामी मत करनी का है, सिफ विद्या और बुद्धि की समझ और विचार का नहीं है	७४

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
७	संग का बयान सार बचन छन्द बन्द बचन ४१ "सोधत सुरत शब्द धुन अन्तर"	८५ ९१
८	सब जीवों को जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, अपने निज घर और सच्चे माता-पिता की सुध लेकर चलने और उनके चरनों में पहुँचने का जतन करना चाहिए	९४
९	परमार्थी को सतसंग में और सतगुरु के सन्मुख परमार्थ की रीत और क़ायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव करना चाहिए	१०१
१०	संतों के बचन हरचन्द अधिकारी प्रति हैं, पर कुल्ल जीवों को अपनी २ ताक़त के मुवाफ़िक़ उनका मानना और उनके मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और बर्तावा दुरुस्त करना ज़रूर चाहिये	१०८
११	राधास्वामी मत केवल दया का मत है और इस मत में जीव का उद्धार सहज होता है	११४
१२	चेत कर सतसंग और अभ्यास करके, परमार्थी चिन्ता और खटक हिरदे में पैदा करना कि जिससे पूरा काम बन जावें	१२६
१३	मज़बूत करना प्रतीत और प्रीत का, राधास्वामी दयाल के चरन कँवल में	१३१
१४	वर्णन प्रीत और प्रतीत का गुरु-चरनन में	१५०
१५	**राधास्वामी मत संदेश**	१६९
१६	राधास्वामी दयाल के चरनों में जैसी-तैसी प्रीत करना चाहिए, तब सहज २ सच्चा उद्धार होता जावेगा और एक दिन काम पूरा बन जावेगा	२५०

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
१७	हर शख़्स को अपने जीव-चैतन्य के भण्डार का खोज और पता लगाकर वहाँ पहुँचने का जतन करना चाहिये कि जिससे परम आनन्द को प्राप्त होवे, और जनम-मरन और देह के दुख-सुख से बचाव हो जावे	२५६
	अर्थ शब्द नम्बर २, पोथी सार बचन छन्द बन्द, बचन ४१, "सुन्नी सुरत शब्द बिन भटकी"	२६८
१८	मालिक का संसार में नर रूप धर कर औतार लेना जीवों के सच्चे उद्धार और कल्यान के वास्ते निहायत दरजे की दया और मेहर का निशान है।	२७२
१९	'इतसे मोड़ और उतसे जोड़' यानी संसार और माया के पदार्थों से चित्त को हटाकर, राधास्वामी दयाल के चरनों में यानी स्वरूप और शब्द की धार से जोड़ना चाहिये	२८४
२०	मन और सुरत का मुख, अन्तर में, ऊपर की तरफ़ मोड़ने, और आहिस्ता २ चढ़ाने में, हमेशा सुख और आनन्द ज़्यादा से ज़्यादा मिलेगा, और दुख, तकलीफ़ और चिन्ता, दूर और कम होते जावेंगे। इस वास्ते यह अभ्यास कुल्ल जीवों को, चाहे औरत होवे या मर्द, वास्ते अपने असली फ़ायदे के, करना लाज़िम और मुनासिब है	२९३
२१	वर्णन रौशन और अँधेरी किरनियों का, जो कि पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना में चैतन्य और जड़ की प्रकट अंस हैं, और उपदेश वास्ते पहुँचने निरमल चैतन्य यानी हमेशा के नूरानी देश में, जहाँ अँधेरा यानी काल और माया बिल्कुल नहीं हैं	३०३
	शब्द १२, बचन ४१, सार बचन छन्द बन्द "निरखो री कोई उठकर पिछली रतियां"	३०९
२२	चैतन्य को, विशेष चैतन्य और महा चैतन्य से मेल करना चाहिये, न कि सामान्य चैतन्य और जड़ से	३११

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
२३	ध्यान में आसानी अभ्भास की, और भजन में किसी क़दर कठिनता का वर्णन	३२२
२४	वर्णन निर्मल और कपट या लपेट की भक्ति का	३३५
२५	सच्चे परमार्थ की कमाई के वास्ते सच्ची और निर्मल चाह, और प्यार और खौफ़ ज़रूर है, और जो यह बातें न होंगी तो जो कुछ कार्रवाई परमार्थ की, की जावेगी, वह कर्म में दाखिल होगी। प्रेम और भक्ति की तरक़्क़ी नहीं होगी	३४१
२६	सतसंग, अंतर और बाहर, सम्हाल कर करना चाहिए, तब फल और फ़ायदा उसका प्रकट होगा	३५१
२७	जीवों को, वास्ते बचाव तकलीफ़ और दुखों से, और प्राप्ति सच्चे और अमर सुख और आनन्द के, अपने घट में, संतों की जुगत के मुवाफ़िक़ स्वरूप का ध्यान और शब्द के सुनने का थोड़ा-बहुत अभ्यास ज़रूर करना चाहिये	३६१
२८	साध के संग की महिमा और उसका फ़ायदा, जो सच्ची दीनता और प्रेम के साथ संग किया जावे	३६७
२९	वर्णन महिमा सुरत-शब्द मार्ग और संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का, कि जिससे सहज में, जीवों का सच्चा उद्धार होता है	३७९
३०	क़ुदरती सबूत इस बात का कि सिर्फ़ राधास्वामी मत में, असल भेद सच्चे मालिक और उसकी क़ुदरत का, और सच्चा और पूरा तरीक़ा जीव यानी सुरत के सच्चे और पूरे उद्धार का वर्णन किया है, और जिसके समझने	

नम्बर बचन	सुरखी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सज़ा
	और अभ्यास करने के वास्ते कुछ खास ज़रूरत विद्या के पढ़ने की नहीं है, यानी राधास्वामी मत के भेद और जुगत को, मर्द और औरत, पढ़े-लिखे और अनपढ़, सब आसानी से समझ सकते हैं और उसका अभ्यास मेहर और दया से बे-खतरे और निर्विघ्न कर सकते हैं	३९१
३१	वर्णन इस बात का कि संत-मत के मुवाफ़िक़ राधास्वामी पद कुल्ल का अखीर और सिद्धान्त है और यही अपार और अनन्त है। इसके परे और कोई पद नहीं है और न हो सकता है	४०५
३२	शब्द, द्वारे सुरत के, अपने निज घर में (जो कि राधास्वामी धाम है) पहुँच सकती है। और द्वारों से धुर मंज़िल तक नहीं पहुँचेगी। कहीं न कहीं रास्ते में अटक रहेगी और कारज पूरा नहीं बनेगा	४१०
३३	मन और सूरत, नौ द्वारों से झांक कर इस लोक के भोगों में फँस गये हैं। सो दसवें द्वार की तरफ़ झांकने और चलने से उन बन्धनों से छुटकारा होगा, और सन्त सतगुरु की दया से एक दिन निज घर में पहुँच कर परम आनन्द को प्राप्त होंगे	४३२
	अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन नम्बर ३५, पोथी सार बचन छन्द बन्द	
	"आरत गाऊं स्वामी सुरत चढ़ाऊँ"	४४५
	अर्थ शब्द नम्बर १६, बचन ४१, पोथी सार-बचन राधास्वामी छन्द बन्द (दूसरा भाग)	
	"सुर्त बन्नी गुरू पाया बन्ना"	४५०
३४	कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और भेद सुन कर (हर एक जीव को जो उनके बाल-बच्चे हैं)	

प्रेमपत्र राधास्वामी

दूसरा भाग

बचन १

राधास्वामी मत वालों का बरताव अपने मन और इन्द्रियों के साथ

१—जो कोई सच्चा होकर परमार्थ में लगे और राधास्वामी मत में शामिल होकर उसके मुवाफ़िक़ अभ्यास शुरू करे, तो उसको चाहिए कि अपने मन और इन्द्रियों की चौकीदारी करने की आदत डाले, यानी इनकी चाल-ढाल की निरख-परख करता रहे कि फ़िज़ूल कामों और फ़िज़ूल ख़्यालों और फ़िज़ूल चीज़ों में किस क़दर मन और इन्द्रियाँ बहती रहती हैं, और उन कामों और ख़्यालों और चीज़ों से इनको, जब २ वे उस तरफ़ को जावें, रोकता रहे।

२—यह काम एक दिन या जल्दी का नहीं है। जन्मान-जन्म और जुगान-जुग और सालहा-साल से यह मन, इन्द्रियों के वसीले से, मुनासिब और ना-मुनासिब और

ज़रूरी और फ़िज़ूल ख़्यालों और कामों और पदार्थों में भटकता रहता है, और कहीं भी इसको पूरी शान्ति या ठहराऊ आनंद कि जिसके पीछे फिर तृष्णा या इच्छा उससे बढ़ कर दूसरे भोग की पैदा न होवे, नहीं मिलता है। इस सबब से यह मन हमेशा दुखी और भोगों की चाह की चिंता में सदा मलीन और उदास रहता है, और जब देखो, किसी न किसी मतलब के वास्ते जतन यानी मेहनत और मशक़्क़त करता रहता है।

३—असल बात यह है कि असली स्थान सुरत यानी रूह का, राधास्वामी के चरनों से लगा कर सत्तलोक तक है, और असली स्थान मन का त्रिकुटी में है, और जो कि वहाँ का थोड़ा-बहुत सुख और आनन्द यह मन भोगे हुए है, और उसी स्थान के मसाले का इसका ख़मीर है, इस सबब से यह मन जब तक कि उलट कर त्रिकुटी में न जावेगा, तब तक नीचे के स्थानों में, भूल और भरम करके हर एक काम और ख़्याल और पदार्थ में, उस असली स्थान के आनंद को ढूँढता है, और जैसे २ अपने २ संगियों से जिस २ बात या पदार्थ की महिमा और उसकी प्राप्ति में आनंद और मान-बड़ाई वग़ैरा का हाल सुनता है, उसी मुवाफ़िक़ उस पदार्थ के हासिल करने के लिये मेहनत और जतन करता है, और जब वह पूरा आनंद नहीं मिलता, तब उसी पदार्थ और उसी काम से चित्त

इसका किसी क़दर हट जाता है। यानी फिर उसकी तरफ़ इसकी वैसी तवज्जह नहीं रहती है, और दूसरे पदार्थों या कामों या ख़्यालों की तरफ़ जिनकी ज़्यादा तारीफ़ सुनी है, लग जाता है। और ऐसे ही कभी किसी और कभी किसी चीज़ में इसका शौक़ लगता रहता है। और कभी ख़ाली नहीं रहता है, यानी अपनी चंचलता नहीं छोड़ता है।

४—सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि अपने मन और इन्द्रियों की चाल की जाँच करता रहे। और जब वह ना-मुनासिब और ग़ैर-ज़रूरी और फ़िज़ूल ख़्यालों या कामों में तवज्जह करें, उसी वक़्त या जिस क़दर जल्दी होश और समझ आवे, उनको रोक कर या तो चरनों की तरफ़ अपने अंतर में लगावे, या सुमिरन और ध्यान करे, या पोथी का पाठ करे। और नहीं तो जो ज़रूरी और मुनासिब कार या ख़्याल दुनियावी होवे, उसमें लगावे। ख़ुलासा यह कि मन और इन्द्रियों को बाहर की तरफ़ या अपने अन्तर में नीचे की तरफ़, बे-फ़ायदा बहने से, जहाँ तक मुमकिन होवे, रोकता रहे। और जब कभी इसका बल पेश न जावे, तब चरनों में प्रार्थना करे, और अपनी नालायक़ी पर अफ़सोस करके आइंदा को हिम्मत बाँधे कि फिर ख़्याल या तरंग के उठते ही रोक लगाऊँगा। और जब ऐसा मौक़ा होवे, उस वक़्त फ़ोरन नाम के सुमिरन या स्वरूप

के ध्यान या शब्द के श्रवण में लग जावे, तो वह तरंग जो बहुत ज़बर न होगी, हट जावेगी। और जो पूरी-पूरी न हटा सके, तो भी इस खैंचा-तानी में उसका ज़ोर बहुत कम हो जावेगा, यानी यह उसको ऊपर की तरफ़ खींचेगा और वह तरंग नीचे या बाहर की तरफ़। जो इसकी ताक़त ज़बर होगी तो वह तरंग दूर हो जावेगी और मन अंतर में चरनों में लग जावेगा। और जो तरंग ज़बर हुई, तो भी उसका ज़ोर बहुत घट जावेगा, और धार उसकी बाहर या नीचे की तरफ़ बहुत कमज़ोर होकर जारी होगी। इसी तौर से लड़ाई करते २ अभ्यासी की ताक़त बढ़ती जावेगी। और फिर वह हर क़िस्म की तरंग को उसके उठते ही राधास्वामी दयाल की दया से जीत सकेगा।

५—मालूम होवे, कि मन और उसकी तरंग का ऐसा हाल है कि जब ख़याल करके अंतर में पहिले हिलोर होकर कोई तरंग काम, क्रोध, लोभ, मोह या अहंकार या दस इन्द्रिय के भोग की प्रकट हुई, और इस शख़्स ने उसको मदद देकर बढ़ाना शुरू किया, और उसकी धार बढ़ कर उस इन्द्रिय के द्वारे तक आ गई कि जिस इन्द्रिय के विषय का भोग लेना मंज़ूर है, तो इस बक़्त जो कोई अभ्यासी उस तरंग की धार को रोकना या उलटना चाहे, तो उसका उलटना बहुत मुश्किल मालूम होवेगा। जो किसी तरह से उस वक़्त वह भोग नहीं भोगा जा सकता है, तो यह तरंग

की धार दूसरा रूप धरके बाहर निकलेगी, यानी अक्सर तो वह क्रोध रूप धर कर प्रकट होवेगी और अभ्यासी इसके रोकने में अपने आप को बे-इख़्तियार और बे-ताक़त देखेगा। एक तरकीब से अलबत्ता यह तरंग की धार उलट सकती है, और वह सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा रंज और सच्ची शरम और हया है। यानी जब तेज़ ख़ौफ़ ग़ालिब होवे, या अपनी बे-इज़्ज़ती का ख़्याल दिल में पैदा हो जावे, या कोई सख़्त मुसीबत या रंज का खटका मन में आजावे, तो उस वक़्त कैसी ही ज़बर तरंग किसी क़िस्म की क्यों न होवे, फ़ौरन इन्द्रिय द्वार से लौट कर मन की मन में समा जावेगी।

६—इसी वास्ते सच्चे परमार्थियों ने ख़ौफ़ और रंज और फ़िक्र को वास्ते इलाज अपने मन की बीमारी के, मुक़द्दम रक्खा है। बल्कि बाज़ों ने अपने मालिक से आप यह बात माँगी है कि किसी क़िस्म की बीमारी यानी रोग और किसी क़िस्म की चिंता उनको ज़रूर बख़्शिश होवे, कि उसके सबब से उनका मन किसी क़दर दुबला और कमज़ोर रहा आवे और भोगों में बहुत चंचलता न करे। संतों ने डर की महिमा इस तौर पर करी है :—

डर करनी डर परम गुर, डर पारस डर सार।
डरत रहे सो ऊबरे, ग़ाफ़िल खाई मार॥

७—और रोग और सोग और चिन्ता की निस्बत ऐसा कहा है :—

रोगी सद जीवित रहे, बिन रोगहि मर मर जाय ॥
सोगी नित हरखत रहे, बिन सोग चौरासी जाय ॥
चिन्ता में जो नित रहे, सो मिले अचिन्ते आय ॥

८—खुलासा यह है कि जो अपने मन को परमार्थ की चिंता में रक्खेगा और सच्चे मालिक और सतगुरु की अप्रसन्नता का ख़ौफ़ दिलाता रहेगा और अपने प्रीतम के बिछुड़ने यानी जुदाई का सोग और रंज उसके मन में जब-तब पैदा होता रहेगा और दुनिया और अपने मन की बीमारी का हाल देख कर सुस्त और उदास होता रहेगा, वही शख़्स जल्दी मन और इन्द्रियों को क़ाबू में लावेगा और परमार्थ का असली फ़ायदा उठावेगा।

९—और चंचल मन हमेशा धक्के खाता रहेगा, क्योंकि उसको दरबार में दख़ल नहीं मिल सकता। और रास्ते ही में से काल और माया उसको उसकी चाह के मुवाफ़िक़ अनेक तरह की तरंगें उठवा कर गिरा देंगे, यानी नीचे की तरफ़ को वापिस कर देंगे और उसकी चढ़ाई नहीं होने देवेंगे।

१०—अब, विचारना चाहिए कि सच्चे परमार्थी को किस क़दर ज़रूरत अपने मन और इन्द्रियों के सम्हाल की है। इसी का नाम निरख और परख है। निरख से यह

मतलब है कि अपने मन और इन्द्रियों की चाल पर नज़र रक्खे, और परख यह है कि जब वे ग़ैर-वाजिब या ना-मुनासिब या ग़ैर-ज़रूरी और फ़िज़ूल कामों या ख़्यालों या चीज़ों या बातों में लगें, तो उसी वक़्त उनको उस तरफ से हटा कर मुनासिब और फ़ायदेमंद काम और ख़्याल में लगावे। बहुत से इल्म वाले लोग भी अपना बरताव और व्यवहार बहुत सम्हाल के साथ रखते हैं और अपना वक़्त फ़िज़ूल कामों या बातों में ख़र्च नहीं करते। फिर परमार्थी पर तो उनसे भी ज़्यादा फ़र्ज़ है कि अपने वक़्त की सम्हाल रक्खे कि बे-फ़ायदा ख़र्च न होवे। और अपने मन और इन्द्रियों की भी रोक रक्खे कि ना-मुनासिब और फ़िज़ूल कामों और बातों की तरंगें न उठावें। तब कोई दिन के इस क़िस्म के अभ्यास से, वह अपने मन और इन्द्रियों की सच्ची और पूरी चौकीदारी और सम्हाल कर सकेगा और फिर परमार्थ का गहरा फ़ायदा हासिल करता जावेगा।

बचन २

राधास्वामी मत वालों का बरताव साथ अपने कुटुम्ब-परिवार और बिरादरी के

१—राधास्वामी मत के अभ्यासियों को हुक्म है कि अपने घर में रह कर और पेशा या रोज़गार ब-दस्तूर जारी रख कर, जो जुगत कि उनको बताई जावे, उसका

अभ्यास दो बार, तीन बार, या चार बार हर रोज़ एक-एक घंटे या कुछ कम, करते रहें और दुनिया की फ़िज़ूल और बे-फ़ायदा चाहें उठानी मौक़ूफ़ करें। और जिस वक़्त अभ्यास करें, उस वक़्त तो ज़रूर इस क़दर होशियारी रक्खें कि दुनिया के ख़याल उनके मन में जहाँ तक मुमकिन होवे, न आवें, और जो बग़ैर इरादे के ऐसे ख़्याल उठें, तो उनको जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, हटा देवें।

२—सतसंगी को चाहिए कि अपने कुटुम्ब-परिवार के संग, प्रीत-भाव के साथ बरताव करे और जिसका जो हक़ होवे, जहाँ तक मुमकिन होवे, उसको अदा करे। जो कुटुम्बी इसके साथ सच्चे परमार्थ में शामिल हो जावें तो बहुत अच्छा, नहीं तो, एक दो या तीन मरतबा इसको चाहिए कि उनको राधास्वामी मत की बड़ाई और उसके अभ्यास का फ़ायदा खोल कर समझावे। जो यह बात उनकी समझ में आजावे और वे अपनी राज़ी से जिस क़दर शामिल होवें, उनको अपने साथ परमार्थ में लगा लेवे। और जो वे टेकी या करमी और भरमी होवें और संतों के बचन को न मानें और भेख और पंडितों की चाल के मुवाफ़िक़ अपना बरताव जारी रक्खें, तो राधास्वामी मत के अभ्यासी को चाहिए कि उनके साथ ज़िद्द और अदावत न करे। उनको उनके हाल पर छोड़ देवे और दुनिया का व्यवहार उनके साथ ब-दस्तूर बर्तता रहे।

३—जो इसके कुटुम्बी बे-फ़ायदा झगड़ा और लड़ाई इसके साथ इस निमित्त करें कि यह राधास्वामी मत को छोड़ कर उन्हीं का संग देता रहे, तो (जो इसकी समझ में राधास्वामी मत की बड़ाई अच्छी तरह आगई है) उनसे साफ़ कह देवे कि वह उनका संग नहीं दे सकता है, चाहे वे उससे प्रीत भाव और दुनिया के व्यवहार का बरतावा रक्खें या नहीं, लेकिन उनके दीन और दुनिया के मुआमले में किसी तरह से दख़ल न देवे, जिस तरह का परमार्थ और व्यवहार उनको भावे, वे ब-दस्तूर करते रहें। धन की मदद जिस क़दर हो सके उनकी करता रहे और एहतियात रक्खे कि इसकी बे-परवाही के सबब से उनको किसी तरह की तकलीफ़ न होवे।

४—जो इसकी स्त्री और पुत्र परमार्थ में इसके संगी हो जावें और माता, पिता और भ्राता और बहन भी संग देवें, तो इन सब की ज़्यादा ख़ातिरदारी और प्यार-भाव करे, क्योंकि यह सब धुर मंज़िल तक का संग देकर, आख़िर को, सब मिल के एक ही स्थान यानी सत्तलोक और राधास्वामी धाम में बासा पावेंगे, और जब तक दुनिया में उनका संग है, तब तक एक दूसरे को दोनों काम में यानी स्वार्थ और परमार्थ में मदद देवेगा। धन्य भाग है ऐसे सतसंगी के कि जिसका कुल्ल घर परमार्थ में उसके शामिल है, और जो सब शामिल न होवें और थोड़े से ही

जैसे स्त्री और पुत्र शामिल होवें, तो भी भागवान है कि उसको घर में भी मदद मिल सकती है और सतसंग में भी मदद तैयार है ॥

५—अपनी बिरादरी से भी राधास्वामी मत के सतसंगी को जहाँ तक मुमकिन होवे, ऐसी होशियारी और सम्हाल के साथ बरताव करना चाहिए कि जिसमें कोई झगड़ा और बखेड़ा पैदा न होवे और न किसी से दुश्मनी या अदावत क़ायम होवे। हर जगह और हर हालत में दीनता यानी नियाज़-मंदी बड़ा भारी असर वाला औज़ार काम देने के वास्ते सतसंगी के पास मौजूद रहता है। जहाँ जैसा मौक़ा और मुनासिब देखे, वहाँ उसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई करे, और बे-परवाही और धमकी और सख़्ती के बचन किसी से या किसी की निस्बत ज़बान से निकालना मुनासिब नहीं। इसमें नाहक़ तकरार और फ़िसाद खड़ा होता है और सतसंगी को फ़िसाद और झगड़े को हमेशा जहाँ तक मुमकिन होवे, बचाना चाहिए ताकि उसके परमार्थ में ख़लल और नुक़सान न आवे।

६—अपने दोस्तों से भी राधास्वामी मत के सतसंगी को प्यार भाव के साथ बरताव रखना चाहिए। पर जो वे और रिश्तेदार और बिरादरी के लोग जब २ मिलें इसके परमार्थ की हँसी या खिल्ली उड़ावें और तान और तंज़ के बचन कहते रहें, तो एक, दो, या तीन बार उनको सहूलियत

के साथ जबाब साफ़ देकर उनकी ग़लती पर उनको ख़बरदार कर देवे, और राधास्वामी मत की महिमा और बड़ाई उनके रू-ब-रू बयान कर देवे। और जो फिर भी वे अपनी आदत हँसी और खिल्ली की न छोड़ें और जब २ मिलें, तब २ उस सतसंगी के साथ छेड़-छाड़ करते रहें, तो मुनासिब है कि उनसे कम मिले और अपने वक़्त फ़ुरसत को सुमिरन, ध्यान या भजन या पाठ में लगाना शुरू कर देवे। राधास्वामी दयाल की मेहर से वे सब आहिस्ता २ आपही उस सतसंगी की तरफ़ से हट कर अलेहदा सोहबत इख़्तियार कर लेंगे और इससे आइन्दा को बहुत सरोकार न रक्खेंगे। जब ऐसी सूरतें होती जावें तो जानो कि राधास्वामी दयाल की दया है कि वे आप अपने अभ्यासी सतसंगी का पीछा हर एक से छुड़ाते जाते हैं। और एक दिन इसी तरह सब रिश्ते और डोरियों को बिल्कुल ढीला करके सुरत को सहज में अपने निज घर पहुँचा देवेंगे।

७—सतसंगी को चाहिये कि जो उसके घराने में पुरानी रस्में जारी हैं और उसके कुटुम्बी उनको बिरादरी की ख़ातिर ब-दस्तूर जारी रखना चाहें तो उनको उन रस्मों में बर्तने देवे। और जो वे परमार्थ में इसका संग दे रहे हैं, तो इसको भी मुनासिब है कि ज़ाहिरी तौर पर उन रस्मों में अपने कुटुम्बियों का संग देवे। और अंतर में यह भी और कुटुम्बी भी राधास्वामी का ध्यान करें। इसमें किसी तरह

का परमार्थी हर्ज नहीं होगा। जब तक सतसंगी गृहस्थ में बैठा है, तब तक उसको अपनी बिरादरी से थोड़ा-बहुत व्यवहार करना ज़रूर और मुनासिब है। और इस वास्ते उनकी ख़ातिर कोई २ पुरानी रस्म और चाल भी जारी रखना मुनासिब है। और जिसमें बिरादरी के शरीक होने या दख़ल देने की ख़ास ज़रूरत नहीं है, उस रस्म में कमी-बेशी करने का इख़्तियार है, और जिस रस्म के सबब से कोई ख़ास तकलीफ़ या नुक़सान या मुशकिल उठानी पड़े और ऐसी रस्म को बदलना मुनासिब मालूम होवे और बिरादरी का उसमें ख़ास दख़ल नहीं है, तो इख़्तियार है कि उस रस्म को जिस तौर से मुनासिब होवे बदल देवे। पर इस क़दर एहतियात रक्खे कि कोई काम अहंकार और ज़बरदस्ती (और लोगों के दिल दुखाने को) दिखावे के साथ न करे कि इसमें नाहक़ तकलीफ़ और नुक़सान उठाना पड़ेगा।

॥ शब्द ३ ॥

राधास्वामी मत में जो हुक्म दिये हैं, उनके मानने के वास्ते जुगत भी बताई है। और मतों में यह बात बहुत कम पाई जाती है।

१—मालूम होवे कि हर एक मत में हुक्म दिये गए हैं—कोई मानने के वास्ते और कोई छोड़ने के वास्ते। इन हुक्मों का पढ़ लेना और ज़बान से कह देना और सुना देना बहुत आसान है। पर उनके मुवाफ़िक़ बरताव करना, इस तौर पर कि जो बात करना चाहिये, उसको थोड़ा बहुत ज़रूर करना, और जो बात मना है, उसको जहाँ तक मुमकिन होवे, न करना—यह काम बहुत मुशकिल है। क्योंकि इस बरताव में मन और इन्द्रियों पर चोट पड़ती है और उस चोट की बरदाश्त हर किसी को नहीं हो सकती है।

२—यही सबब है कि कुल्ल मतों में (१) बहुत से लोग तो अपने मत से बिल्कुल ना-वाक़िफ़ यानी मूरख हैं और (२) जो थोड़ी-बहुत समझ-बूझ रखते हैं, वह बाचक हैं, यानी ज़बानी अपने मत के हुक्म और क़ायदे सब सुना सकते हैं पर उनके मुवाफ़िक़ बरताब बिल्कुल नहीं है और (३) कोई बिरले यानी बहुत कम ऐसे लोग होंगे जो थोड़ी-बहुत कोशिश, हुक्म और क़ायदों के मुवाफ़िक़ अपना बरताव दुरुस्त करने की, कर रहे हैं, और जाँच कर देखते हैं कि उनकी मेहनत और कोशिश बहुत कम फ़ायदा देती है, यानी मन और इन्द्रियाँ और उनकी तरंगें बहुत ज़बर हैं और उनकी रोक और अटक बहुत मुशकिल बल्कि ना-मुमकिन मालूम होती है।

३—इससे ज़ाहिर है कि जितने हुक्म हर एक मत के आचार्य ने दिये हैं, वह सब बेकार और बे-फ़ायदा हो गये। क्योंकि आम तौर पर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई कहीं नज़र नहीं आती है, बल्कि बहुत से मुआमलों में साफ़ उन हुक्मों के बर-ख़िलाफ़ यानी उलटा बरताब होता है। और फिर वे लोग अपनी उलटी कार्रवाई देख कर न शरमाते हैं न पछताते हैं, और न ख़ौफ़ मालिक या अपने आचार्य का दिल में लाते हैं। अब किस तरह यक़ीन किया जावे कि इस क़िस्म के लोग अपने आचार्य का हुक्म मानते हैं? या उनसे उम्मीद अपने उद्धार की रखते हैं? ऐसे लोगों की कार्रवाई पर पूरा २ भरोसा और एतबार न दुनिया के मुआमलों में हो सकता है, न दीन के मुआमले में। क्योंकि जब उनका कोई ख़ास मतलब या नफ़े का मुआमला होगा, उसमें फ़ौरन अपनी बुद्धि और चतुराई के साथ सत्य और असत्य और हक़ और ना-हक़ और दूसरे का नुक़सान और हक़-तल्फ़ी का ख़याल छोड़ कर, जो कुछ कार्र-वाई होगी, उसको फ़ौरन अपने, दुनिया के मतलब के पूरा करने के वास्ते उलट-पलट कर देंगे।

४—कोई २ मत में ऐसा लिखा है कि जो कोई हुक्मों को न मानेगा, वह जहन्नुम यानी नरकों में सज़ा पावेगा और उद्धार उसका नहीं होगा। पर यह डर बहुत कम असर लोगों के दिल पर पैदा करता है, क्योंकि प्रत्यक्ष यानी

मौजूदा हाकिम का ख़ौफ़ सज़ा वग़ैरा का, यह मन बहुत कम मानता है, और अनेक तरह की तदबीर और जुगती निकाल कर क़ानून के पंजे से अपनी निकासी ढूँढ़ लेता है। फिर ग़ायब हाकिम यानी मालिक का डर कौन माने ? सिवाय इसके, विद्या और बुद्धिवान लोगों ने बहुत सी किताबें हर एक मत में ऐसी बनाई हैं कि जिससे लोगों के दिल से इस बात का यक़ीन भी जाता रहा कि आया नर्क, चौरासी और जहन्नुम वग़ैरा, मौजूद हैं। बल्कि ऐसी समझौती उनको दी गई है कि यह मुक़ामात और सज़ायें, वास्ते डर न और धमकाने नादान जीवों के, उस्ताद लोगों ने अपनी मान-बड़ाई और धन पैदा करने के मतलब से तजवीज़ की हैं, और असल में उनका कहीं वजूद नहीं है।

५—इस तौर पर आम लोग हर एक मत में थोड़े या बहुत निडर होकर बर्तते हैं और वहाँ के हुक्मों के मानने या न मानने की कुछ परवाह नहीं करते। और जो लोग कि आम लोगों के अफ़सर और अगुवा और समझाने-बुझाने वाले हैं, वे आपही उन हुक्मों पर जैसा कि चाहिये, नहीं चलते। फिर औरों की सम्हाल उनसे क्या हो सकती है ?

६—यहां तक हाल, और मतों का, बयान किया गया। अब राधास्वामी मत का हाल लिखा जाता है कि इस मत में जितने हुक्म हैं वह बतौर नसीहत-नामे के लिखे

गये हैं और यह उपदेश है कि उनका मानना, वास्ते अपने फ़ायदे और भले के जीवों को मुनासिब और ज़रूर है।

७—और उन हुक्मों के साथ ही अपदेश, वास्ते कमाने सुरत-शब्द योग के, लिखा गया है कि जब तक कोई अभ्यास करके अपने मन और सुरत को इन्द्रिय घाट से हटा कर, ऊँचे की तरफ़ अपने घट में नहीं चढ़ावेगा, तब तक उसका उद्धार नहीं हो सकता है।

८—और यह भी संग २ उपदेश है कि कुल्ल मालिक, सत्त पुरुष, राधास्वामी दयाल की, जो घट २ में मौजूद हैं सच्चे मन से सरन लेकर जो कोई अभ्यास में लगेगा, उसी को मेहर और दया प्राप्त होगी। और वही मेहर और दया आहिस्ता २ एक दिन उसके जीव का सच्चा उद्धार कर देगी, यानी उसकी सुरत को सत्तलोक और राधास्वामी के चरनों में पहुंचा देगी। कि जहां पहुँच कर वह अमर और अजर आनंद पाकर हमेशा को मगन और सुखी हो जावेगी और जनम-मरन और दुख-सुख के झगड़ों से हमेशा को उसका बचाव हो जावेगा।

९—और राधास्वामी मत में यह भी पहिले ही समझाया जाता है कि जो कुछ रचना बाहर ब्रह्माण्ड वग़ैरा में मौजूद है, वह सब छोटे नमूने के तौर पर हर एक आदमी के पिंड में मौजूद है। और जो कि कुल्ल

मालिक सब जगह मौजूद कहा जाता है, तो हर एक जीव के संग उसके पिंड में भी मौजूद है। इस वास्ते सच्चे मालिक से मिलने का रास्ता राधास्वामी मत में हर एक जीव के घट में बताया जाता है।

१०—अब मालूम करो कि कर्म तीन क़िस्म के हैं। एक, संचित कर्म जो कि आइन्दा जनमों में भोगे जायँगे। दूसरे, प्रारब्ध कर्म जो कि इसी जनम यानी देह में भोगने पड़ेंगे। और तीसरे, क्रियमान कर्म जो इस जनम में बनते हैं और जिनका फ़ल कुछ इसी जनम में और कुछ आगे के जनमों में भोगना पड़ेगा। और जब तक कि यह तीनों क़िस्म के कर्म काटे नहीं जावेंगे, तब तक सच्चा और पूरा उद्धार होना मुमकिन नहीं है।

११—अब समझना चाहिए कि राधास्वामी मत की ख़ूबी और बड़ाई इस बात में है कि राधास्वामी दयाल और संतों ने ऐसी जुगत दया करके बताई है कि उसके कमाने से दिन २ जीव का घाट यानी स्थान बदलता जावेगा। और इसी कमाई के साथ इसके कर्म सहज में कटते जावेंगे। और इसी जन्म में वह संतों की दया से निःकर्म होता जावेगा। फिर जो हुक्म कि नसीहत के तौर पर लिखे हैं, संतों का जीव, उनकी मेहर और दया से आप ही अपने मन और इन्द्रियों पर ज़ोर देकर मानता जावेगा। और रफ़्ता २ एक दिन ऐसे मुक़ाम पर पहुँच

जावेगा कि जहाँ पर कर्म और भर्म और काल और माया का असर इस पर हरगिज़ नहीं पहुँच सकेगा। और इस तौर पर एक दिन अपना पूरा उद्धार जीते जी आप देख लेगा।

१२—अब वह तरकीब कि जिससे सुरत, मन और इन्द्रिय और पिंड और ब्रह्माण्ड से न्यारी होकर अपने निज घर में पहुँचे और तीनों क़िस्म के कर्म यहाँ के यहाँ ही कट जावें, तफ़सील के साथ आगे बयान की जाती है, कि जिससे संतों की दया का हाल अच्छी तरह समझ में आवेगा, और तब राधास्वामी मत की बड़ाई का थोड़ा बहुत यक़ीन मन में आवेगा।

१३—जिस वक़्त कि जीव राधास्वामी मत में शामिल हुआ, उसी वक़्त से उसको दो क़िस्म का अभ्यास करना पड़ता है, एक वास्ते समेटने मन और सुरत बिखरी हुई के, असली बैठक की जगह पिंड में, और दूसरा वास्ते उनको चढ़ाने के आकाश में, और फिर उसके और पिंड के परे ब्रह्माण्ड में, और फिर उसके भी परे संत अथवा दयाल देश में, जहाँ सच्चा और पूरा और अमर आनन्द प्राप्त हो सकता है। और मालूम होवे कि इससे नीचे के देश में ऐसा पूरा और अमर आनंद ब-सबब मिलौनी माया के हासिल नहीं हो सकता है।

१४—पहिले अभ्यास का यह फ़ायदा है कि मन और सुरत जो जगह २ पिंड में और बाहर अनेक पदार्थों और जीवों में बँधे और बिखरे हुए हैं, सिमट कर मध्य में आँखों के परे जमा होवें। वही असली बैठक का स्थान है।

१५—इतने ही अभ्यास में जो दुरुस्ती से बन आवे, इस क़दर रस और आनंद मिलेगा और कैफ़ियत नज़र आवेगी कि इस जीव के दिल में सच्चा शौक़ और प्यार अपने सच्चे और कुल्ल मालिक के चरनों में पैदा हो जावेगा, और अपने घट में सब सामान के भंडार होने का यक़ीन दिल में आवेगा।

१६—दूसरे अभ्यास का यह फ़ायदा है कि मन और सुरत धुन की डोरी पकड़ के ऊपर को चढ़ेंगे, और अपने सच्चे और प्यारे मालिक की दया और मेहर के परचे अंतर में सिवाय मामूली रस और आनंद और कैफ़ियत वग़ैरा के, देखने लगेंगे। तब सच्चा प्रेम जागना शुरू होगा और सच्चा यक़ीन मालिक के हाज़िर और नाज़िर और हर वक़्त अंग-संग मौजूद होने का दिल में आता जावेगा। और जिस क़दर यह हालत पैदा होती, और आइन्दा बढ़ती जावेगी, उसी क़दर इस जीव के मन में सच्चा ख़ौफ़ अपने सच्चे मालिक की अप्रसन्नता, यानी नाराज़गी, का पैदा होता जावेगा और उसी क़दर यह जीव ना-पसंद और बुरे कामों से आप बचता जावेगा, और जिन कामों के वास्ते

हुक्म है और मालिक की प्रसन्नता उसमें हासिल होने की उम्मीद है, उसमें यह जीव आप बर्तने लगेगा।

१७—खुलासा यह कि जब कोई काम इस जीव से नाक़िस या ना-पसन्द बनेगा, फ़ौरन उसको मालिक की अप्रसन्नता का हाल, अपने अन्तर में, वक़्त अन्तर अभ्यास के, मालूम हो जावेगा। यानी उस रोज़ मामूली रस और आनन्द भजन का नहीं मिलेगा और न कुछ ख़ास मेहर और दया मालूम पड़ेगी। इस भारी नुक़सान के खौफ़ से यह जीव आप कोशिश करेगा कि जिस से इस पर दया और मेहर दिन २ ज़्यादा होती रहे, और भजन का रस और आनन्द मिलता रहे। इस तरकीब के साथ जीव सच्चे तौर पर आसानी के साथ, तामील सच्चे हुक्मों की, कर सकता है, और नहीं तो चाहे जिस क़दर पढ़ो और समझो, और चाहे जिस क़दर बातें बनाओ, यह मन और इन्द्रियाँ हरगिज़ किसी के क़ाबू में नहीं आवेंगे। कहीं २ अगर किसी ख़ास ख़ौफ़ या दुनियावी नुक़सान के ख़्याल से जो कोई बच रहा, या उसने दुरुस्ती से बरताव किया, यह आम जीवों के वास्ते काफ़ी नमूना नहीं हो सकता है। आम तौर पर, जो कोई बचेगा, वह राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक की दया, और अपने वक़्त के संत सतगुरु की मदद से बचेगा, और उस दया और मदद हासिल करने को राधास्वामी मत के

मुवाफ़िक़ अभ्यास करना ज़रूर दरकार है और उसके उसूल आर क़ायदों के मुवाफ़िक़ समझ और बूझ सम्हालना चाहिये।

१८—अब राधास्वामी मत के अभ्यासी के कर्मों के कटने का हाल सुनो कि जिस क़दर यह जीव अभ्यास करके ऊपर को चढ़ता जाता है, उसी क़दर उसके कर्मों का दफ़्तर साफ़ होता जाता है। यानी अन्दर में जो चैतन्य आकाश है, उसमें सब संचित कर्मों के नक़्श मौजूद हैं। जैसे २ सुरत और मन उस आकाश मन्डल से गुज़र करते हैं, वे कर्म ज़िंदा हो कर, घड़ियों और पलों में, अपना भोग दे देते हैं और कर्मों का मैदान इस तरह साफ़ होता चला जाता है। दूसरे, प्रारब्ध कर्मों का असर ब-सबब नित्त अभ्यास चढ़ाई मन और सुरत के, बहुत कम व्यापता है। यानी जब सुरत आँख के मुक़ाम पर, जैसे जाग्रत अवस्था में, बैठती है, उस वक़्त संसार और देह के दुख-दर्द और चिंता और फ़िक्र सब व्यापते हैं। और जिस क़दर कि सुरत की धार अपने अन्तर में मुतवज्जह होवे यानी खिंच जावे, जैसे सोने के वक़्त या गहरे नशे या ग़श की हालत में, या जब कि डाक्टर लोग शीशी सुँघा कर फोड़ा चीरते हैं या बदन काटते हैं, उस वक़्त देह और संसार का दुख और सुख बहुत कम बल्कि बिल्कुल नहीं व्यापता है। इसी तरह जिस क़दर अभ्यास करके सुरत

का अन्तर में खिंचाव और चढ़ाव हुआ है, उसी क़दर प्रारब्ध कर्मों का वेग यानी असर उस अभ्यासी को कम मालूम होवेगा। तीसरे, क्रियमान कर्मों का फल इस तौर पर दूर हो जावेगा कि राधास्वामी मत का अभ्यासी जिसने सच्ची सरन राधास्वामी दयाल की ली है, जो कुछ काम ज़रूरी करेगा, वह उनकी मेहर और दया और मौज के आसरे करेगा और फल की इच्छा उनकी मौज और दया के आसरे रक्खेगा। जो मौज मुवाफ़िक़ हुई तो बहुत अच्छा, और जो ना-मुवाफ़िक़ हुई तो भी बहुत अच्छा। हर हाल में अपने प्यारे मालिक की मौज और मरज़ी के मुवाफ़िक़ अपने मन को चलाना और उसी में राज़ी रहना।

१६—जब इस तौर पर अभ्यासी ने कर्म किये तो उसका बन्धन उन कर्मों और उनके फल में मुत्लक़ नहीं हुआ। इस तरह रफ़्ता २ सब कर्म कटते जावेंगे। और जब अभ्यासी मेहर और दया से त्रिकुटी के मुक़ाम तक पहुँचेगा, तब सब झगड़े और बखेड़े, काल और कर्म और माया और भरम वग़ैरा के, नीचे रह जावेंगे। और अभ्यासी की सुरत इन सब से न्यारी होकर अपने निज घर में, यानी सत्तलोक और राधास्वामी धाम में, पहुँच कर परम और अमर आनन्द को प्राप्त होवेगी।

———

बचन ४

होशियार करना राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, वास्ते सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों के, और दुरुस्ती से करने अभ्यास के, अपने अन्तर में

१—जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल हुए हैं, उनको चाहिए कि जिस क़दर बन सके मन के विकारों में न बरतें, और अपना भजन और ध्यान होशियारी के साथ करें कि जिसमें मन, दुनिया के ख़्यालों में, बहता न फिरे, और थोड़ी देर को ज़रूर एकाग्र होकर शब्द या स्वरूप में लग जावे। और थोड़ा बहुत रस और आनन्द अन्तर में पावे।

२—जो इस क़दर होशियारी नहीं की जावेगी कि थोड़ा बहुत मन एकाग्र होकर अभ्यास में लगे, तो अन्तर में कुछ भी रस नहीं आवेगा। और न कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया का परचा अन्तर में मिलेगा। क्योंकि राधास्वामी दयाल का बचन है कि जो कोई मन के विकारों में बर्तेगा, वे उसका संग नहीं दे सकते, यानी कुछ मदद नहीं कर सकते।

३—मन के विकारों से मतलब यह है कि पाँचों दूत—अहंकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह के साथ, और दसों इन्द्रियों की तरंगों में निडर और निलज्ज होकर, और ज़रूरी और फ़िज़ूल चाहों का फ़र्क़ न करके बे-तकल्लुफ़ बरताव करना। अब इन विकारों का थोड़ा सा हाल लिखा जाता है।

१—अहंकार का अंग

४—इस अंग की जड़ वहीं समझनी चाहिये जहाँ से कि 'अहं' शब्द का ज़हूर हुआ। यह अंग सब से ज़बर है और सबसे पीछे इसका पूरा-पूरा अभाव होगा।

५—मान और बड़ाई की चाह हर एक के दिल में इसी अंग के सबब से पैदा होती है।

६—सन्तों ने कहा है कि हर एक आदमी के मन में अनेक तरह के मान धसे रहते हैं, जैसे (१) ज़ात-पांत का अहंकार (२) ख़ानदान यानी घराने का अहंकार (३) धन और हुकूमत का अहंकार (४) विद्या और हुनर का अहंकार (५) रूप, ज़ेवर और पोशाक और सवारी वग़ैरा का अहंकार (६) देह, बल और कुटुम्ब और बिरादरी का अहंकार (७) क़ौम की बड़ाई का अहंकार (८) बुद्धि, चतुराई और गुण का अहंकार (९) औलाद और नौकर-चाकरों का

अहंकार (१०) मकान और जायदाद का अहंकार (११) इज़्ज़त और हुरमत का अहंकार (१२) बुजुर्गों की अमीरी और बड़ाई का अहंकार (१३) राजों और अमीरों और साहूकारों और बड़े आदमियों से दोस्ती और जान-पहिचान होने का अहंकार (१४) बैराग और त्याग का अहंकार और (१५) अभ्यास का अहंकार वग़ैरा २।

७—जब तक यह मान मन से दूर न होंगे या किसी क़दर ढीले नहीं पड़ेंगे, तब तक सच्चे मालिक और सतगुरु के चरनों में सच्ची दीनता और सच्चा प्रेम मन में नहीं आवेगा। इस वास्ते हर एक आदमी को चाहिए कि जहाँ तक बन सके सतगुरु और उनके सतसंग से निष्कपट होकर दीनता के साथ बरताव करे तो कुछ फ़ायदा परमार्थी प्राप्त होगा। और इसी तरह अभ्यास के समय अन्तर में भी दीनता के साथ भजन और ध्यान में लगे, तब अन्तर में रस आवेगा।

मान मद त्याग करो गुरु संग ॥टेक॥

जब लग सजनी मान न छोड़ो।
तब लग रहो तुम तंग ॥ १ ॥

करम भरम जब लग नहिं छूटे।
नहिं धारो गुरु रंग ॥ २ ॥

बैर ईर्षा नित्त सतावे।
करत रहो तुम सब से जंग ॥ ३ ॥
याते कहना मान पियारी।
सीखो भक्ती ढंग ॥ ४ ॥
दीन होय गुरु सरनी आओ।
चित्त से चेत करो सतसंग ॥ ५ ॥
गुरु भक्ती की रीत सम्हालो।
धुन में सुरत लगाओ उमंग ॥ ६ ॥
नित अभ्यास करो अस कोई दिन।
प्रेम बसे तुम्हरे अँग अँग ॥ ७ ॥
राधास्वामी मेहर से सुरत चढ़ावें।
होयँ करम सब भंग ॥ ८ ॥

२-काम का अंग

८-यह अंग भी बहुत ज़बर है और जड़ इसकी दसवें ठार में है, और रचना की तरक़्क़ी का सबब यही अंग है।

९-और सब तरह की कामना यानी चाहें इसी अंग के सबब से जीवों के मन में पैदा होती हैं।

१०-ब्रह्माण्ड में इस अंग की धार बहुत सूक्ष्म है, लेकिन पिंड में जिस क़दर कि उतार नीचे को होता गया, उसका ज़ोर बहुत बढ़ता गया है।

११—परमार्थी अभ्यासियों को लाज़िम है कि इस अंग से बचते रहें। और जो गृहस्थी हैं, वह एहतियात के साथ अपना बर्ताव करें। यानी ज़्यादती न होने पावे, नहीं तो अभ्यास के फ़ायदे में कसर पड़ेगी, क्योंकि काम अंग के साथ चैतन्य की धार नीचे को उतरती है।

१२—काम अंग का असर मन पर बहुत जल्द होता है। इस क़िस्म के बचन सुन कर या पढ़ कर या उनका ख़्याल करके या कोई ख़ूबसूरत स्त्री को देख कर या उसका ज़िक्र सुन कर या उसकी तसवीर देख कर या औरतों के पास बैठने-उठने से या उनके लिबास और पोशाक वग़ैरा के देखने से, कामी पुषों के मन में, फ़ौरन काम अंग जागता है। और चाहे उनको उसका भोग प्राप्त न होवे, लेकिन इसके ख़्याल करने ही में बहुत सा हर्ज और नुक़सान परमार्थी अभ्यासी का हो जाता है। यानी उसके मन की हालत किसी क़दर बदल जाती है। यानी इस क़दर चैतन्य धार का उतार या बहाव हो जाता है कि कुछ देर तक उसका मन अभ्यास के क़ाबिल नहीं रहता है। इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासी को मुनासिब और लाज़िम है कि ऐसी हालतों में अपना बचाव रक्खे। यानी ऐसे ख़्यालों और ज़िक्रों में और ऐसे तमाशों वग़ैरा में शामिल न होवे, और पहिले ही दम अपने मन को उस तरफ़ से हटा लेवे। नहीं तो थोड़ा बहुत शामिल हो जाने पर मन का हटाना बहुत मुश्किल मालूम पड़ेगा, बल्कि ना-मुमकिन होगा।

१३—मालूम होवे कि यह मन आप ही चोर है यानी रसों का रसिया है। इस सबब से काम की तरंग और ख़्याल और ज़िक्र और तमाशे वग़ैरा में आप ही दौड़ कर जाता है और उन बातों में रस और मज़ा लेता है।

१४—चाहे उस वक़्त परमार्थी बुद्धि याद भी दिलावे, और इसको होशियार भी करावे, पर यह मन रस में आसक्त होकर तवज्जह नहीं करता है और उन ख़्यालों से नहीं हटता, जब तक कि पूरा रस अपने ख़्याल में नहीं ले लेता है। इस वास्ते परमार्थी को चाहिये कि जिस क़दर होशियारी और एहतियात बने, शुरू में, ऐसे ख़्याल या बातों के, करे। और जब उसमें लिपट गया तब जल्दी से नहीं हटता है।

१५—जो काम की निस्बत ऊपर बयान किया गया, यही हाल कुल्ल कामनाओं का समझना चाहिये। यानी जो कामना जिसके दिल में ज़बर है, वह उस कामना के ख़्याल या बात-चीत और विस्तार वग़ैरा और पूरे करने में ऐसा ही आधीन और आसक्त और बेहोश है, जैसे कामी, कामिन के साथ होता है। इस वास्ते परमार्थी अभ्यासी को कोई कामना संसार की बहुत ज़बर नहीं उठाना चाहिये, और न काम अंग में ना-मुनासिब और ना-जायज़ और बे-मौक़े बर्ताव करना चाहिये। अपनी सब चाहें राधास्वामी दयाल

के चरनों में अर्पण करके, जो कुछ जिस-जिस मुआमले में मौज से होता जावे, उसको राधास्वामी दयाल की मौज समझ कर, उसी पर राज़ी होवे और शुकर करे। और जो किसी मुआमले में ज़रूरत ज़्यादा होवे, तो राधास्वामी दयाल के चरनों में भजन के वक़्त प्रार्थना करे। वे अपनी मेहर और दया से कोई न कोई तरह से इसका काम बनावेंगे, या वह ज़रूरत दूर कर देंगे।

३—क्रोध का अंग

१६—यह अंग भी बहुत ज़बर है और जड़ इसकी लिकुटी में है। जब २ कामना मन के मुवाफ़िक़ पूरी नहीं होती है, तब ही क्रोध अंग जागता है, कभी अपने ऊपर जो कसर अपनी नज़र आती है, और कभी दूसरे पर, जो उसकी तरफ़ भरम, कसर डालने का, इसके मन में पैदा होता है।

१७—इस अंग के साथ चैतन्य की धार शरीर में या बाहर फैल कर किसी क़दर भस्म हो जाती है। और इस वास्ते अभ्यासी को चाहिये कि इस अंग से बहुत डरता रहे और जहाँ तक हो सके, इसमें जान कर या भूल कर कभी बर्ताव न करे। सिर्फ़ मसलहत के मुवाफ़िक़ बर्ताव चाहिये कि जिसमें बन्दोबस्त अन्दर या बाहर दुरुस्ती के साथ जारी रहे, और हर एक अंग या शख़्स अपनी अपनी कार्रवाई मुनासिब करता रहे।

१८–जो कोई मामूल से ज़्यादा ज़ोर, सुरत के चढ़ाने के लिये, भजन या ध्यान में देते हैं, उनको अकसर यह दोनों अंग, यानी काम और क्रोध, अंतर में ज़्यादा सताते हैं। बल्कि क्रोध अंग ज़्यादा ज़बर होकर ज़रा २ सी बात में बाहर प्रकट हो जाता है।

१९–सबब इसका यह है कि जब सुरत ऊपर को किसी क़दर चढ़ेगी, तो जो वह निर्मल और साफ़ है तो ऊपर ठहर सकेगी। नहीं तो, जिस अंग की मलीनता उसमें विशेष करके है, वही अंग प्रकट होकर सुरत को नीचे उतार लावेगा, जैसे काम का धार अन्तर में तरंग उठा कर सुरत को नीचे को गिरा देवे या क्रोध की धार उठ कर सुरत को फैला देवे। इस वास्ते अभ्यासी को अपनी सफ़ाई का ज़्यादा ख़्याल रखना चाहिये, इस तौर पर कि जाग्रत और स्वप्न की हालत में उसके होश दुरुस्त रहें, यानी मन और इन्द्रियाँ उसकी काम और क्रोध की तरंग के साथ न बहें। तो भजन और ध्यान के समय और उसके पीछे भी थोड़ा बहुत यक़ीन पड़ेगा कि यह तरंगें उसकी सुरत को नहीं उतारेंगी। और जो जाग्रत के समय मन चलायमान हो जाता है और होश नहीं लाता है, तो अभ्यास के समय या उसके पीछे भी इसकी होशियारी काम नहीं देगी।

४–लोभ का अंग

२०—यह अंग बहुत ओछा और नाक़िस है, और शुरूआत इसकी सहसदलकँवल और उसके नीचे से समझना चाहिये। जिस किसी में यह अंग ज़बर है, वह परमार्थ से ख़ाली रहेगा, क्योंकि उसकी वृत्ति का ज़बर झुकाव बाहर की तरफ़ पदार्थों में होगा, और ऐसी हालत वाले से अभ्यास, सुरत और मन को समेटने और चढ़ाने का, नहीं बन सकता।

२१–सिवाय इसके लोभी पुरुष कभी संतों के बचन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं कर सकेगा, क्योंकि वह अपने लोभ की तरंग को पूरा करने के वास्ते जीवों को दुख पहुँचाने और उनका हक़ मेटने में ज़रा ख़ौफ़ नहीं करेगा और इस सबब से उसको परमार्थ का लाभ नहीं मिल सकेगा।

२२–यहाँ लोभ से मतलब यह है कि अपने वाजिबी हक़ से ज़्यादा हासिल करने की चाह उठा कर, जिस तरह वह चाह पूरी होवे, उसके निमित्त जतन करे, चाहे उसमें जीवों को दुख और नुक़सान पहुँचे।

२३–लोभी पुरुष सच्चे परमार्थ और सच्चे प्रेमियों की हमेशा निंदा करेगा और आप अपने जीव के सच्चे कल्यान के निमित्त कुछ ख़र्च नहीं कर सकेगा, बल्कि सच्चे प्रेमियों को ख़र्च करते हुए देख कर, अपने मन में बहुत

जलेगा और कुढ़ेगा। और उनको नादान और मूर्ख कहेगा, जिसके सबब से अपने सिर पर निंदा का भार और पाप चढ़ावेगा।

२४–राधास्वामी मत के अभ्यासियों को लोभ अंग से ज़रूर बचते रहना चाहिये, बल्कि अपने हक़ और वाजिबी आमदनी से मालिक के प्रसन्न करने और जीवों के उपकार के निमित्त कुछ ख़र्च करना चाहिये। तब कुछ परमार्थ मिलेगा यानी मालिक के चरनों का प्रेम हिरदे में पैदा होगा।

५–मोह का अंग

२५–यह अंग भी लोभ अंग के मुवाफ़िक़ बहुत ओछा और परमार्थ के वास्ते नाक़िस है, और शुरूआत इसकी सहसदलकँवल और उसके नीचे से है। वाजिबी और मुनासिब तौर का मोह इस क़दर दुखदाई नहीं है। पर ज़्यादती इसकी बहुत नुक़सान और तकलीफ़ पैदा करती है। और ऐसा आदमी परमार्थ में बहुत कम लग सकता है, क्योंकि वह हमेशा उन लोगों का जिनमें उसको मुहब्बत और मोह विशेष है आधीन रहेगा। और जैसे वह उसको चलावेंगे, वैसी चाल चलेगा। फिर उससे सतगुरु और मालिक का बचन, जो कि उसके मोहब्बत वालों के मन के खिलाफ़ होगा, नहीं माना जावेगा, और न मालिक के चरनों में उससे गहरी प्रीत करी जावेगी।

२६–मोही आदमी दुनियादारों और कुटुम्बी और बिरादरी के डर और लज्जा से सतसंग भी नहीं कर सकेगा, और इस सबब से उसकी आँख भीं नहीं खुलेगी, और बुद्धि भी मलीन यानी संसारी रही आवेगा, और परमार्थ की बड़ाई और ज़रूरत उसके मन में नहीं समावेगी। बल्कि सच्चे परमार्थ और परमार्थियों की निंदा करने को तैयार होगा, और जो भक्ति के अंगों में सच्चे परमार्थी और प्रेमी जन बरतेंगे, उनको देख २ करके वह अपने मन में जलता और कुढ़ता रहेगा। इस सबब से सच्चा परमार्थ इस को कभी हासिल न होगा।

ईर्षा और विरोध का अंग

२७—सिवाय ऊपर के लिखे हुए अंगों के दो अंग और भी हैं कि वह अहंकार और क्रोध से क़रीब २ मिले हुये हैं। यानी जिसके मन में अहंकार ज़्यादा है, उसको दूसरे की मान और बड़ाई देख कर ज़रूर ईर्षा आवेगी। और जो कोई विशेष अहंकारी और क्रोधी है, वह दूसरे से, जो वक़्त क्रोध या मान बड़ाई के मुआमले में थोड़ा बहुत उसका मुक़ाबला करेगा, बिरोध यानी दुश्मनी करने लगेगा। इस तरह यह दोनों अंग, ईर्ष्या और विरोध के, उन पाँचों अंगों से थोड़े बहुत मिले हुए हैं। अब इनका थोड़ा सा हाल जुदा २ लिखा जाता है,

ताकि अभ्यासी जीव इन अंगों से डरते रहें और जहाँ तक बने, इनके चक्कर में न आवें।

ईर्षा का अंग

२८—अभ्यासी के वास्ते यह अंग बहुत नुक़सान देने वाला है, क्योंकि जब ईर्षा किसी की तरफ़ से, उसकी बड़ाई देख कर, या भरम के सबब से, मन में बस जाती है, तब हमेशा उसको देख कर या उसका ज़िक्र सुन कर एक क़िस्म की जलन पैदा होती है कि वह विरह और प्रेम अंग को थोड़ा बहुत सुखा देती है और भजन और ध्यान का रस नहीं आने देती है। और जो २ तरंगें कि ईर्षा के सबब से उस शख़्स की तरफ़ उठती हैं, वे भी विरोध की बढ़ाने वाली और भजन के रस और आनन्द से दूर डालने वाली होती हैं। यानी ऐसे ही ख़्याल उठा करते हैं कि किस तरह उस आदमी को नुक़सान या दुख पहुँचे, और उसकी निंदा सुनने में चित्त मगन होता है। और आप भी अनेक तरह से उसकी बुराई और निंदा करता है। यानी अपने ऊपर पाप पर पाप बढ़ाता है। और जो दूसरी तरफ़ से भी बराबर मुक़ाबला होता जावे, तो यह ईर्षा का अंग विरोध की सूरत पैदा करता है, यानी पूरी दुश्मनी आपस में हो जाती है। और फिर उसके बढ़ाव में और जारी रहने में दोनों का परमार्थी नुक़सान

होता है। इस वास्ते अभ्यासी परमार्थी को ईर्षा के अंग में बर्ताव करने से बहुत परहेज़ करना चाहिये। बल्कि जो किसी वक़्त अपना थोड़ा बहुत नुक़सान या हर्ज भी हो जावे तो कुछ ख़्याल न करे, और जहाँ तक बने ईर्षा को चित्त में न धसने देवे।

२९—जो किसी अपने बराबर वाले की बड़ाई या मान प्रतिष्ठा होवे तो उसको देख कर अंतर में जलन न लावे और यह समझे कि बिना मौज मालिक के कोई बड़ा या छोटा नहीं हो सकता। फिर जो कोई उसके साथ ईर्षा करेगा, वह मालिक के हुक्म के साथ बर-खिलाफ़ी करेगा, और हुक्म अदूली के पाप का भागी होगा। इस वास्ते परमार्थी को मुनासिब है कि अपने काम का फ़िक्र करे और दूसरों के काम के झमेले में न पड़े, और अपने चित्त में सदा दीनता रक्खे, और जिसको मालिक बड़ाई देवे, उसके सामने जो अपना काम पड़े, ज़रूर दस्तूर के मुवाफ़िक़ दीन होवे और वहाँ अहंकार न करे, नहीं तो अपना नुक़सान करेगा।

विरोध का अंग

३०—यह अंग अकसर क्रोध या ईर्षा के पीछे पैदा होता है और कभी भरम करके भी मन में धस जाता है और फिर बढ़ता चला जाता है। यह अंग भी दूसरे की

तरफ़ से अंतर में जलन और ग़ुस्सा पैदा करने वाला है और जब, और जिस घट में, यह अंग प्रकट होगा, भक्ति और दीनता और विरह और प्रेम को सुखा देगा।

३१—यह संसारी जीवों का हाल है कि जिस किसी से किसी बात पर नाराज़ हो जावें तो उसके विरोधी हो जावें। पर सच्चे परमार्थी जीवों को हुक्म है कि जहाँ तक मुनासिब होवे, औरों के क़सूरों को मुआफ़ करें और उनकी बुराई और ऐब को याद न लावें, यानी अपने मन में धसने न देवें, क्योंकि इसमें उनके परमार्थ का नुक़सान है।

३२—सच्चे मालिक को यह अंग जैसे ईर्षा और बिरोध और क्रोध वग़ैरा निहायत ना-पसंद हैं। और जिस घट में इनका थाना है, वहाँ उसका नूर प्रकट नहीं हो सकता। सच्चा मालिक दीनता और प्रेम को पसंद करता है। सो सच्चे परमार्थी को चाहिये कि अंतर में अपने इन्हीं अंगों का, जहाँ तक बने, बर्ताव रक्खे और ईर्षा और विरोध और क्रोध को न आने देवे। लेकिन बाहर बन्दोबस्त के वास्ते और ख़ास कर संसारी लोगों से व्यवहार और बर्ताव के वास्ते, जैसा जहाँ मुनासिब होवे, ज़ाहिरी तौर पर बर्ताव करे। पर अपने मन में किसी से असली विरोध या ईर्षा को ठहरने न देवे, और जिस क़दर जल्दी हो सके इन ख़्यालों

को हटा कर सफ़ाई कर लेवे, ताकि अभ्यास और सतसंग में बहुत विघन न डालने पावें।

मन और इन्द्रियों का वर्णन

३३–यह मन ज़ाहिरा इन्द्रियों का आधीन मालूम होता है, यानी जिस तरफ़ इन्द्रियाँ जाती हैं, मन भी उसी तरफ़ जाता है। पर असल में इन्द्रियों की चाल मन के हाल पर मौक़ूफ़ है। यानी जो मन भोगी और विलासी है, वह हमेशा इन्द्रियों के संग चंचल रहेगा, और उसकी इन्द्रियाँ भी, भोगों में भरमती रहेंगी। पर जो मन परमार्थी है, वह आप भी किसी क़दर निश्चल रहता है और उसकी इन्द्रियाँ भी मुनासिब तौर पर और मुनासिब तरफ़ जाती हैं। अंधाधुंध चाल उनकी नहीं होती है।

३४–इस मन की अजीब बनावट है कि अपनी मानन यानी समझ के मुवाफ़िक़ जल्द दुखी और सुखी हो जाता है और असली दुख-सुख का ख़्याल बहुत कम करता है। इस वास्ते इस बात की बड़ी ज़रूरत है कि परमार्थी जीव पहिले कोई दिन सतगुरु या साध गुरु या सच्चे अभ्यासी सतसंगी का सतसंग करें और बचन चित्त देकर होशियारी के साथ सुने और उनका मनन भी करे। और जो अपने फ़ायदे की बातें होवें उनको फ़ौरन ग्रहण करता जावे। और जो नुक़सान की बातें होवें, उनको छोड़ता जावे। तो कुछ

अरसे में ऐसे परमार्थी की समझ और विचार बदल जावेगा, यानी उसकी समझ और हालत परमार्थी होती जावेगी। और संसारी अंग और ख़वास जो कि थोड़े बहुत पशुओं के मुवाफ़िक़ होते हैं, दूर होते जावेंगे। और तब इस मन की मानन और समझ बदलेगी यानी दुनियादारों के मुवाफ़िक़ इस का व्यवहार और बर्ताव नहीं रहेगा। बल्कि सच्चे भक्त और प्रेमी जनों की समझ और चाल इसमें आती जावेगी।

३५—मालूम होवे कि परमार्थियों की चाल दुनियादारों की चाल के बर-खिलाफ़ यानी उलटी होती है। दुनियादार धन, स्त्री, पुत्र और नामवरी के वास्ते जान देने को तैयार होते हैं, और परमार्थी अपने सच्चे मालिक के चरनों पर इन सब को, बल्कि अपने तन मन और जान को, वारने को तैयार रहता है।

३६—उसकी नज़र में मालिक की प्रसन्नता और उसके नूर के दर्शन के बराबर कोई चीज़ रचना भर में नहीं ठहरती है। और दुनियादार, धन और नामवरी की, सबसे ज़्यादा क़दर करते हैं और मालिक की तरफ़ से बे-ख़बर रहते हैं।

३७—परमार्थी हर एक के साथ दीनता और प्यार के साथ बर्तना चाहता है, पर दुनियादार अहंकार और मान और बे-परवाही की नज़र से हर एक को देखता है।

३८—परमार्थी को दुनिया के सामान सब नाश्मान और ना-चीज़ और दुखदाई नज़र आते हैं और संसारी इन चीज़ों की बड़ी क़दर करता है और उनको बड़ी न्यामत, और अपने वास्ते निहायत सुखदाई, देखता है। इस सबब से परमार्थी और संसारी जीवों का आपस में मेल नहीं हो सकता, क्योंकि उनके मन और समझ की हालत जुदी २ है।

३९—दुनियादारों की मानन और समझ ग़लत है। और यह ग़लती उनको अख़ीर वक़्त पर या निहायत सख़्त तकलीफ़ के वक़्त पर नज़र आती है कि उस वक़्त कोई शख़्स या सामान जिसका उन्होंने बड़ा भरोसा बाँधा था, उनकी मदद नहीं कर सकता, बल्कि उनको छोड़ कर सब जुदा हो जाते हैं। और परमार्थी ने जो समझ धारन की है, उसका फ़ायदा उसको हर वक़्त और तकलीफ़ या अख़ीर के वक़्त बहुत ज़्यादा मालूम होता है। यानी जिस सच्चे मालिक को उसने अपना सच्चा माता और पिता मान कर पकड़ा है और उसकी याद अंतर में बढ़ाई है, वह मालिक-दयाल हर वक़्त उसकी ख़बरगीरी करता है और तकलीफ़ के वक़्त ज़रूर मौजूद होकर और अपने दर्शन देकर और कुल्ल तकलीफ़ को फ़ौरन दूर करके महा सुख और आनन्द अपने बच्चे को देता है।

४०—अब समझना चाहिये कि हर एक परमार्थी जीव

को परमार्थियों की चाल और समझ धारन करके और चेत कर सतसंग और अभ्यास करके अपने मन और इन्द्रियों की हालत, जिस क़दर जल्दी हो सके, बदलना चाहिये कि जिससे हमेशा आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता रहे । क्योंकि जब तक यह संसारी या मिलौनी के अंग में थोड़ा बहुत बर्ताव रक्खेगा, तब तक सतसंग में भी कभी सुखी और कभी दुखी होता रहेगा । और जब संसारी ख़वास और चालें मन से निकल जावेंगी, तब दुख भी इसके पास नहीं आवेगा । और जो आवेगा तो यह उसको जल्द अपनी समझ और विचार की मदद से दूर कर देगा ।

४१–ख़ुलासा यह है कि जिस मन में दुनिया और दुनियादार और माया के पदार्थों का भाव ज़बर है और दुनियादारों के स्वभाव और चाल के मुवाफ़िक़ उसका बर्ताव और व्यवहार है, वही मन संसारी है । और जिस मन में सच्चे मालिक और सतगुरु और सतसंग और सच्चे मालिक के नाम यानी शब्द और प्रेम का भाव ज़बर है, और भक्तों और प्रेमियों की चाल के मुवाफ़िक़ उसका व्यवहार और बर्ताव जारी है, वही परमार्थी मन है ।

४२–ऐसे परमार्थी मन की चाल, संसारी मन की चाल से जुदी होगी । और इस वास्ते उसकी इन्द्रियों की

चाल और रीत भी संसारी जीवों की इन्द्रियों से जुदी होगी। यानी परमार्थी की इन्द्रियों चंचल नहीं होवेंगी और संसारी जीव और माया के पदार्थ और संसारी बातों में उनकी तवज्जह बे-ज़रूरत और बग़ैर किसी ख़ास काम के नहीं जावेगी।

४३—जो परमार्थी अभ्यासी इस तरह की सम्हाल अपने मन और इन्द्रियों की रक्खेगा, उसको बहुत कम माया और भरम और काल और करम का झटका लगेगा, और अपने अंतर में थोड़ा बहुत रस और आनन्द अभ्यास का लेता रहेगा, और सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया और मेहर के भी परचे उसको अन्तर और बाहर बराबर मिलते जावेंगे, और उसके सुरत और मन को परमार्थ में पुष्ट और मज़बूत करते जावेंगे।

बचन ५

राधास्वामी मत में जो गुरु-भक्ति जारी है, उस पर तान मारने वालों को जवाब, और वर्णन इस बात का कि सच्चे परमार्थ और सच्चे उद्धार की प्राप्ति के लिये अपने समय के भेदी और अभ्यासी, मनुष्य-स्वरूप गुरु से

मिलना और उनके साथ दीनता और भाव और प्यार करना बहुत ज़रूर है।

१—राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ सुरत यानी रूह कुल्ल मालिक, सत्त पुरुष, राधास्वामी की अंस है और उन्हीं के चरनों से निकस कर और नीचे उतर कर पिंड में, नेत्रों के मुक़ाम पर, बैठ कर अपनी देह और दुनिया की कार्रवाई करती है। और रास्ते में जितने मुक़ाम हैं, उन हर एक मुक़ाम पर ठहरती हुई उतरी है। इसी तौर पर जब संत सतगुरु की दया से उलटने की जुगती का भेद लेकर उसका अभ्यास करेगी तब हर एक मुक़ाम पर चढ़ती हुई, और वहाँ कुछ दिन ठहर कर, सैर करती हुई, कुछ अरसे में अपने निज स्थान पर जा पहुँचेगी।

२—हर एक स्थान का जो रूप है, वह आदि में सुरत ने ही वक़्त उतार के धारन किया और इसी तरह लौटते वक़्त वही रूप उसका हर एक स्थान पर होता जावेगा।

३—उतार के वक़्त जो रूप कि सुरत ने जिस मुक़ाम पर कि धारण किया, वह रूप नीचे की रचना का करता और मालिक है।

४—उलटते वक़्त जब तक कि सुरत अपने से ऊपर के स्थान के रूप में प्यार और भाव लाकर और उससे मिलने

की चाह ज़बर उठा कर, जो जुगत कि संतों ने दया करके बताई है, उसका अभ्यास रोज़मर्रा शौक़ के साथ न करेगी, तब तक उस स्थान और स्वरूप की प्राप्ति न होगी, यानी वह मुक़ाम फ़तह न होगा।

५–इसी तरह, हर एक स्थान की भावना करके रास्ता चलेगा, और धुर मुक़ाम यानी राधास्वामी के चरनों में पहुँचने का इरादा पक्का और सच्चा करके, हर एक रास्ते की मंज़िल को तै करती हुई, सुरत चलेगी और हर स्थान पर अपना असली रूप धारन करती हुई जावेगी।

६–जो कि हर एक स्थान का धनी यानी मालिक नीचे की रचना का करता और मालिक है, इस वास्ते इसी क़िस्म का भाव अपने से ऊपर के स्थान के स्वरूप में धारन करके सुरत को चलना पड़ेगा।

७–लेकिन जो कि धार आदि में राधास्वामी दयाल के चरनों से जारी होकर, हर एक स्थान पर ठहरती हुई, और रूप धर कर रचना करती हुई चली आई है और जो कि अभ्यासी सुरत को धुर मुक़ाम पर पहुँच कर अपने सच्चे माता-पिता और कुल्ल मालिक का दर्शन करना मंज़ूर है, इस वास्ते उसको मुनासिब और लाज़िम है कि बजाय इसके कि हर एक मुक़ाम के धनी को मालिक समझ कर उसमें प्यार और भाव लाकर चले, सिर्फ़ कुल्ल मालिक

राधास्वामी का ध्यान, और उन्हीं के चरनों में प्यार और भाव धर कर रास्ता तै करे। इसमें उसको पूरी मदद और दया हर जगह मिलती जावेगी। और हर मुक़ाम पर इष्ट के बदलने की ज़रूरत न होगी क्योंकि एक से ज़्यादा स्वरूप में सच्चा और पूरा भाव और प्यार नहीं आ सकता है। और जब कि वे सब स्वरूप, रास्ते के, सिर्फ़ अपनी अपनी हद्द में कार्रवाई कर सकते हैं और अपने से ऊपर के स्थान में उनका कुछ दख़ल नहीं पहुँच सकता है, तो वह पूरे और सच्चे करता और मालिक नहीं हो सकते। यह सब कार-परदाज़ यानी कारिन्दे हैं, और राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक। और उनका हुक्म सब जगह जारी है। इस वास्ते उन्हीं का इष्ट मज़बूत बाँध कर और उन्हीं के चरनों में पूरा प्यार और भाव लाकर चलना चाहिये, तो रास्ता सुखाला और आसानी से तै होगा, और किसी क़िस्म का ख़तरा और विघ्न रास्ते में वाक़ै न होगा।

८—यहाँ पर इस बात का जताना बहुत ज़रूर है कि जो लोग सत्त पुरुष राधास्वामी से बे-ख़बर रहे, और जिन-को सतगुरु, भेदी धुर धाम के, नहीं मिले, उन्होंने रास्ते में धोखा खाया। यानी जिस मुक़ाम तक जिसकी रसाई हुई, वह उसी मुक़ाम के धनी को मालिक और करता समझ कर वहीं ठहर गये, और आगे चलने का रास्ता उनका बंद हो गया। और इसी सबब से अनेक मत दुनिया में जारी

हो गये। पर जिन को कि संत सतगुरु भाग से मिले, उनको धुर मुक़ाम यानी राधास्वामी पद का भेद मिला। और वही रास्ते के सब मुक़ामों को तै करते हुए, सच्चे मालिक के चरनों में पहुँचे। और जिस ख़तरे में कि और लोग जिनको धुर मुक़ाम का भेद नहीं मिला, पड़ कर धोखा खा गये, वे उस ख़तरे से बच गये।

९—मालिक के चरनों में प्यार और भाव भी कई तरह पर करते हैं। बाज़ों ने (१) पुत्र-भाव यानी मालिक को बाल स्वरूप मान कर प्रीत करी। और किसी किसी ने (२) सखा-भाव यानी मित्र-भाव माना, और कोई (३) स्वामी और सेवक यानी दास-भाव क़ायम करते हैं, और बहुत से (४) पति और स्त्री-भाव मानने हैं, और बिरले (५) पिता पुत्र-भाव मान कर प्रीत करते हैं। हरचंद कि सब का मतलब मालिक के चरनों में प्रीत पैदा करने और बढ़ाने का है, पर इन सब में पति और स्त्री और पिता-पुत्र भाव बहुत उम्दा है, बल्कि पिता पुत्र-भाव सब में बेहतर और सुखाला और निर्मल और निर्विघ्न है। और ख़ास कर इस ज़माने में कि जीव निहायत निबल और कमज़ोर हो गया है और काल के झकोले और माया का लुभाव अनेक रीत से ज़बर हो रहा है, पिता-पुत्र भाव में सहज जीव का गुज़ारा यानी उद्धार मुमकिन है। इस वास्ते मुनासिब मालूम होता है कि हर

एक सच्चा परमार्थी अभ्यासी राधास्वामी दयाल के चरनों में माता और पिता भाव धारण करके, तब अपनी प्रीत और प्रतीत बढ़ावे, और संतों से जुक्ति लेकर नित्त उसका अभ्यास विरह और प्रेम अंग के साथ करे, तो आहिस्ता आहिस्ता एक दिन उसका कारज बन जावेगा। और सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल की दया और मेहर और रक्षा के परचे जीते जी अंतर और बाहर देख कर दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और अपने सच्चे और पूरे उद्धार की निस्बत कोई शक उसके दिल में बाक़ी न रहेगा।

१०—ऊपर के लिखे हुए हाल से मालूम होगा कि राधास्वामी मत में जो अभ्यास मन और सुरत के समेटने और चढ़ाने का मुक़र्रर है, उसमें इष्ट और ध्यान, सिर्फ़ एक सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धारन किया जाता है, और उन्हीं के चरनों में प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ाई जाती है। और जो कि हर एक स्थान पर उनके चरन मौजूद हैं, सो उन्हीं का ध्यान करता हुआ और शब्द की धुन सुनता हुआ अभ्यासी रास्ता तै करता है।

११—अब ख़याल करो कि अभ्यासी या उलटने वाली सुरत, हर एक स्थान पर, अपने ही स्वरूप को सम्हालती हुई, यानी धारन करती हुई, चली जाती है और राधास्वामी

दयाल के चरनों की धार अथवा धुन की डोरी पकड़ कर, रास्ता सुखाला तै करती है, और किसी ग़ैर की पूजा और ध्यान का, सिवाय कुल्ल मालिक के, इस मत के अभ्यास में दखल नहीं है। जब कुल स्थान तै हो गये, तब सुरत अपने सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल के सम्मुख पहुँच कर, दर्शन का आनन्द और बिलास करती है। और उसको ताक़त हासिल हो जाती है कि जब चाहे जब चरनों में मिल जावे और जब चाहे जब अलेहदा हो कर सम्मुख दर्शन का रस लेवे।

१२—चरन से मतलब यह है कि सुरत यानी चैतन्य की धार, जो ऊँचे देश से उतर कर आई है और उसी ही धार का सिलसिला धुर पद से लगा हुआ है, वही उस कुल्ल मालिक का चरन है। यानी उसकी धार दूर से दूर तक फैली और पसरी हुई है। और चैतन्य शक्ति उसी के वसीले से हर जगह पहुँचती है, और दया और मेहर की धार भी उसी धार के साथ रवाँ होती है।

१३—अब ख़्याल करो कि जो संत सतगुरु की रसाई, यानी पहुँच, ऊँचे से ऊँचे स्थान तक शब्द की धार के साथ है, उनमें और उस धार में और फिर उस धार के भंडार में किसी तरह का फ़र्क़ और भेद नहीं रहा। हर एक स्थान का स्वरूप, उनका स्वरूप हुआ, और वही स्वरूप असल में सब सुरतों के स्वरूप हैं जो वक़्त उतार के राधास्वामी

दयाल के चरनों से हर एक सुरत धारन करती हुई चली आई है। फिर ऐसे संत सतगुरु की पूजा और उनके चरनों में भाव और प्यार करना ऐसे है जैसे अपने स्वरूपों में प्यार और भाव और कुल्ल मालिक की पूजा और उसके चरनों में प्यार और भाव करना।

१४–जिनकी दृष्टि स्थूल और मोटी है, और अंतरी भेद की उनको ख़बर नहीं है, वे ऐसा ख़्याल करेंगे कि ऐसे संत सतगुरु की पूजा आदमी की पूजा है, और ऐसा कहेंगे कि यह पूजा और प्यार और भाव मालिक की पूजा और प्यार और भाव के मुक़ाबिले में किसी तरह दुरुस्त और सही नहीं हो सकती। पर इस बात के कहने से उन लोगों की निहायत दरजे की बे-ख़बरी और बिना सोच और बिचार के ओछी समझ ज़ाहिर होती है, जैसा कि नीचे के लिखे हुए बयान से मालूम होगा।

१५–इस लोक की रचना में सब में उत्तम और श्रेष्ठ मनुष्य-शरीर है, यानी कुल्ल जानदारों का हाकिम और अफ़्सर है और सब चीज़ पर थोड़ा या बहुत उसका हुक्म जारी है, और सब जानदारों और चीज़ों से वह जैसा २ मुनासिब समझता है काम लेता है, और कुल्ल इल्म और अक़्ल और हुनर और फ़न और कारीगरी और चालाकी और बंदोबस्त की तजवीज़ें उसी मनुष्य-स्वरूप से ज़ाहिर हुए।

१६—जो ईश्वर और परमेश्वर या मालिक या कोई उसकी अंस या कला इस लोक में वास्ते सिखाने या जारी करने नई और फ़ायदेमन्द चाल या इल्म या अक़्ल के, प्रकट हुई, उसने भी वही उत्तम और श्रेष्ठ मनुष्य-स्वरूप धारन करके कार्रवाई करी। इसी तरह जो कोई भारी विद्यावान या नीति के बनाने और चलाने वाले या हकीम या वैद्य या डाक्टर या और कोई हुनर और कारीगरी वाले ज़ाहिर हुए, वह भी मनुष्य-स्वरूप में प्रकट हुए, और उसी स्वरूप से सब चालें चलाई और लोगों को विद्या और बुद्धि और हुनर और कारीगरी की बातें सिखलाई।

१७—इसी तरह संत सतगुरु ने अपने साथ, और मालिक के चरनों में प्यार और भाव करने की विधि समझाई, और मालिक का पता और भेद भी उन्होंने, यानी संत सतगुरू ने, मनुष्य स्वरूप धर कर प्रकट किया। और यह संत सतगुरु स्वतः संत थे, यानी आप ही आप उस ऊँचे स्थान से आये और बिना किसी से सीखे हुए या सुने हुए असली भेद सच्चे मालिक का उन्होंने प्रकट किया। इसी तरह स्वतः जोगेश्वरों ने ब्रह्म-पारब्रह्म पद का भेद और जुगत उसके प्राप्ति की, प्रकट करी और उनके बचन और बानी को सब कोई बड़ा और ईश्वर का हुक्म मानते हैं।

१८—बल्कि इसी तरह नई २ बात विद्या और बुद्धि

की भी आदि में, और वक़्त २ पर, किसी न किसी मनुष्य ने, बिना किसी से सीखे हुए ज़ाहिर करी। और सब लोग इस बात के क़ायल हैं कि वे मनुष्य उन नई बातों और चालों के पैदा करने वाले हुए। और उनको आज तक सब कोई बड़ा मान कर उनकी ताज़ीम और अदब करते हैं, और उनकी बानी और बचन को सनद मानते हैं, और उसके मुवाफ़िक़ औरों के बचन और बानी की तौल और जाँच करते हैं।

१६—जिस क़दर कि आसमानी किताबें हैं जैसे कि चारों वेद और सरावगियों का आदि पुरान और मुसलमानों का क़ुरान और ईसाइयों की अंजील, सब मनुष्य स्वरूप ऋषीश्वरों या मुनीश्वरों या आचार्यों या पैग़म्बरों से प्रकट हुए हैं और जो कि वह परमेश्वर के कलाम यानी वाक्य मान जाते हैं, तो ज़ाहिर है कि परमेश्वर ने अपने बचन मनुष्य द्वारे कहे और प्रकट किये और उन ऋषीश्वरों और पैग़म्बरों को, जो कि मनुष्य स्वरूप थे, परमेश्वर के ख़ास मेली या मुसाहब या उसके भेद की ख़बर देने वाले मानते हैं, और उनकी बानी और बचन को ख़ास मालिक का कलाम समझते हैं और उन्हीं के वसीले से अपना उद्धार और मालिक के दरबार में पहुँचने का यक़ीन करते हैं, और उनका दरजा मालिक के दरजे से दूसरा मान कर उनकी ताज़ीम और अदब और उनके चरनों में भाव और

प्यार थोड़ा बहुत मालिक ही के मुवाफ़िक़ करते हैं।

२०—यह दस्तूर जो ऊपर लिखा गया, कुल्ल मज़हबों में जारी है, यानी जो लोग कि मालिक का औतार स्वरूप मानते हैं, या उसके भेद का हासिल होना ऋषीश्वर या आचार्य या पैग़म्बरों की मार्फ़त मानते हैं, यह दोनों फ़िरक़े मनुष्य स्वरूप की पूजा या उसी स्वरूप में भाव और प्यार कर रहे हैं। इन दोनों गिरोह से खारिज कोई नहीं है। सब लोग चाहे किसी मत में होवें, इन्हीं दोनों फ़िरक़ों में से हैं, सिवाय नास्तिकों के, कि वे मालिक के क़ायल नहीं हैं। पर वे भी किसी न किसी मनुष्य-स्वरूप आचार्य के, जिसने उनकी किताबें बनाईं और नास्तिक मत जारी किया, क़ायल हैं, और उसको अपने से बड़ा और अपना पेशवा मान कर उसके बचन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते हैं।

२१—जो लोग कि औतार स्वरूप या देवताओं की मूरतें या तसवीरें बना कर पूजते हैं या उनकी ताज़ीम करते हैं, वह सब सूरतें मनुष्य स्वरूप की हैं।

२२—इसी तरह से जो कोई किसी महात्मा या बुर्ज़र्ग के निशान, या उनकी कोई बरती हुई चीज़, या उनके कलाम और बचन, या उनकी समाध या तुरबत या मज़ार की पूजा, भेंट या ताज़ीम करते हैं, या उनकी कोई चीज़

वास्ते अपनी रक्षा के, इस्तेमाल में लाते हैं, वह भी किसी मनुष्य स्वरूप की परशादी या निशान या बचन है, जैसे गुरु और महात्माओं की खड़ाऊँ या जूता या पलंग या कोई कपड़ा या बर्तन या त्रिशूल या सूली का निशान या छोटी तसवीर, या मुसलमानों में कलमा या कोई आयत क़ुरान की, हिन्दुओं में कोई मंत्र या जंत्र सोने, चाँदी या ताँबे या भोजपत्र या काग़ज़ वग़ैरा पर लिख गले में डालते हैं, या बाजुओं पर बधाँते हैं या अँगूठी में रखते हैं।

२३—ऊपर के लिखे हुए हाल से साफ़ ज़ाहिर है कि क्या परमार्थ में और क्या स्वार्थ में, जितनी बातें या चीज़ें हैं, सब मनुष्य स्वरूप से प्रकट हुईं, और सब जगह मनुष्य स्वरूप का ही भाव और प्यार और पूजा और अदब और ताज़ीम जारी है, और मनुष्य स्वरूप ही के बानी और बचन और क़ायदे बाँधे हुये पर अमल-दरामद और कार्र-वाई हर मुआमले में हो रही है।

२४—और जिस वक़्त में कि वे महात्मा और बुर्ज़ुर्ग, जिनकी ऐसी महिमा है, मौजूद होंगे, उस वक़्त में उनके संगी और मानने वाले उनके साथ ऐसा ही, बल्कि इससे ज़्यादा, बरताव करते रहे होंगे, जैसा कि अब उनकी नक़ल यानी मूर्ति और निशानों से कर रहे हैं।

२५—फिर जो राधास्वामी मत में परम पुरुष पूरन धनी राधास्वामी दयाल की (जो संत रूप धर कर प्रगट हुए और जिन्होंने दया करके निज भेद सच्चे मालिक यानी अपने निज रूप का और सहज जुगत उसकी प्राप्ति की समझाई) जिस क़दर भक्ति और भाव और प्यार और अदब और ताज़ीम की गई या की जाती है या करी जावे, वह उनके दरजे और दया के मुक़ाबिले में थोड़ी से थोड़ी और कम से कम है।

२६—जो लोग कि ऐसी भक्ति और भाव और प्यार को देख कर ख़याल करते हैं या तान मारते हैं कि इस मत में मनुष्य-गुरु की पूजा है, वे किस क़दर ग़ल्ती और ग़फ़लत और नादानी के घेर में पड़े हुए हैं? और कैसे बे सोचे और बे समझे और बे विचारे बातें बना कर हँसी उड़ाते हैं?

२७—इस समय में कितनी ही संगत और सभायें इस क़िस्म की जारी हैं, जो गुरु स्वरूप और मालिक के मनुष्य स्वरूप को अपनी आछी बुद्धि और समझ के मुवाफ़िक़ नहीं मानते हैं और न उससे मदद लेने की कुछ ज़रूरत समझते हैं। फिर ऐसे लोगों को सच्चा परमार्थ, जिसकी प्राप्ति निज घट के मानसी और रूहानी अभ्यास के पूरे होने पर मुनहसर है, कैसे हासिल हो सकता है? विद्या पढ़ कर बुद्धि की मदद से पोथियों का पाठ कर लें

और स्तुति और भजन वग़ैरा गा लेवें, मगर भेद के ग्रन्थों से भेद और जुगती का दरियाफ़्त करना और उसके मुवाफ़िक़ अपने अंतर में अभ्यास और कार्रवाई करके रस और आनन्द लेना, बग़ैर मदद भेदी और अभ्यासी गुरु के, हरगिज़ २ मुमकिन नहीं है। यही सबब है कि विद्यावान और अनपढ़ और कर्मी-जीवों की हालत कभी नहीं बदलती, चाहे वे सालहा-साल और जुगान-जुग पोथी पढ़ने और पढ़ाने और भजन और स्तुति गाने और सुनने और मूर्ति पूजा और तीर्थ-व्रत का अभ्यास करते रहें, क्योंकि उनकी सुरत यानी जीवात्मा का घाट उन कामों से नहीं बदलता हैं। बल्कि दिन २ संसार में लिपट कर धन और मान और बड़ाई की आसा और तृष्णा बढ़ती जाती है, और सच्चे मालिक के चरनों का प्रेम या उसके मिलने की चाह एक ज़र्रा भी उनके मन में पैदा नहीं होती।

२८—विद्या पढ़ कर जो कोई चाहे कि इल्म हिसाब और नजूम, यानी ज्योतिष और इल्म-ए-कीमिया और इल्म-ए-पैमाइश और बहुत से इल्मों की किताबें पढ़ कर सीख लेवे, तो बग़ैर मदद उस्ताद के वह किताबें हरगिज़ समझ में नहीं आवेंगी। इसी तरह कोई विद्यावान परमार्थी भेद और अभ्यास की किताबें पढ़ कर जो समझना चाहे और उनके मुवाफ़िक़ घट में अभ्यास करने का इरादा करे, वह बग़ैर भेदी और अभ्यासी गुरु के हरगिज़ २ नहीं कर सकता है।

२९—इससे साफ़ ज़ाहिर है कि जो लोग भेदी और अभ्यासी गुरु का खोज नहीं करते, और जो वे मिलें तो अपनी विद्या और बुद्धि के अहंकार में उनसे कुछ मदद लेना या दरियाफ़्त करना नहीं चाहते, और न उनको अपने से बड़ा मान कर उनके सामने दीन-अधीन होना चाहते हैं, और जिनका परमार्थ सिर्फ़ इख़लाक़ी और मालिक की सिफ़त यानी कर्म और धर्म और स्तुति की पोथियों के पढ़ने और पढ़ाने पर मुनहसर है, या बाहरमुखी कर्म के शास्त्र या किताबें पढ़ कर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करते या कराते हैं, और जो पिछली टेक में बंधे हुए हैं, यानी पुराने, गुज़रे हुए महात्माओं को या औतारों या बुज़ुर्गों या देवताओं को मानते हैं, और अपने वक़्त के भेदी और अभ्यासी गुरू और महात्मा का खोज नहीं करते, और न उन से किसी क़िस्म की मदद लेने की ज़रूरत समझते हैं--इस क़िस्म के सब जीव कर्मी और शरई हैं, और सच्चे परमार्थ से, जिससे जीव का सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ति हासिल होना मुमकिन है, बिलकुल खाली हैं। और जब तक ऐसी हालत उन की रहेगी, यानी अपने वक़्त के भेदी और अभ्यासी गुरु से मिल कर और जुगत दरियाफ़्त करके अभ्यास नहीं करेंगे, तब तक वे सच्चे परमार्थ से ख़ाली रहेंगे, और उनका जनम-मरन और देह सम्बन्धी दुख-सुख भोगने का चक्कर कभी नहीं छूटेगा।

यानी शुभ-अशुभ कर्मों के अनुसार ऊँच-नीच देश और योनि में दुख-सुख भोगते रहेंगे।

अर्थ शब्द नम्बर २३, बचन ४१, पोथी सार बचन छंदबंद

१–गूंगे ने गुड़ खाइया। वह कैसे कहे बनाय।

अर्थ

जिसने कि अपने घट में शब्द का गहरा रस पाया, वह उसको क्योंकर बयान कर सकता है? उसका हाल वही होगा, जैसे कि गूंगे का, जो गुड़ खा कर उसके स्वाद के बयान करने से लाचार है। और यह कि जिस किसी को गहिरा रस अंतर में आया, वही उसके प्रकट करने में आम लोगों के सामने गूंगा हो गया।

२–बहरे ने धुन पाइया। वह क्योंकर कहे सुनाय।

अर्थ

जिसने कि दुनिया की तरफ़ से अपने कान बन्द किये, उसी को अंतर में शब्द खुला। फिर वह उस शब्द और आनन्द के भेद को आम लोगों को कैसे जतावे या सुनावे?

३—अंधे मोती पो लिया। वह किसे दिखावन जाय।

अर्थ

जिसने कि अपनी नज़र दुनिया की तरफ़ से खींच ली यानी आँखें बन्द कर लीं, उसी ने अपनी सुरत की धार को दसवें द्वार में पहुंचाया, यानी मोती पो लिया। फिर वह इस कैफ़ियत को अवाम को कैसे दिखा सकता है ?

४—लूले ने नभ थामिया। यह अचरज कहा न जाय।

अर्थ

जो मन कि दुनिया में दौड़ने से रह गया यानी जिसने चंचलता छोड़ दी, उसी ने चढ़ कर नभ यानी आकाश को थाम लिया और यही अचरज की बात है।

५—पिंगला परवत चढ़ गया। कोइ साधू जाने ताहि।

अर्थ

जो मन कि निश्चल हो गया, वही पिंगला है, और वही सतगुरु की दया से सुमेर पर्वत, यानी त्रिकुटी, पर चढ़ गया। इस हाल को कोई अभ्यासी यानी साधू समझता है।

६--रोगी सद जीवित रहे। बिन रोगहि मर मर जाय।

अर्थ

जो कोई मालिक के चरनों के इश्क़ यानी प्रेम का बीमार हुआ। और जिस किसी ने अपने मन को बीमार जान कर सतगुरु से उसका इलाज कराना शुरू किया, वही एक दिन अमर पद में पहुँच कर, अमर हो जावेगा। और जिस किसी को प्रेम की बीमारी नहीं लगी या जिसने अपने मन की बीमारी की ख़बर न ली यानी अपने को निर्मल और चंगा समझा, वह बारम्बार जनमेगा और मरेगा।

७--सोगी नित हर्षित रहे। बिन सोग चौरासी जाय।

अर्थ

जो अपने प्रीतम, सच्चे मालिक, के वियोग की विरह में उदास और ग़मगीन रहता है, वह दिन २ अंतर में चरन-रस पाकर मगन होता जावेगा। और जिस किसी के हिरदे में मालिक के चरनों की विरह और प्रेम नहीं है, वही मनुष्य चौरासी योनि में भरमता रहेगा।

८--चिंता में जो नित रहे। सो मिले अचिंते आय।

अर्थ

जो कोई अपने मालिक के मिलने और अपने जीव का सच्चा उद्धार और कल्याण करने की चिंता में रहता है, वही एक दिन अचिंत पुरुष यानी सच्चे मालिक से मिल कर निचिंत हो जावेगा।

९—बैरागी भरमत फिरे। रागी मुक्ति समाय।

अर्थ

जिस किसी ने संसार से बैराग किया यानी घर-बार छोड़ कर भेष ले लिया, और मालिक के चरनों का प्रेम और प्यार उसके मन में नहीं आया, तो वह हमेशा चारों खानों में भरमता रहेगा। और जिस किसी के मन में मालिक के चरनों का राग और प्रेम समाया, वही एक दिन मुक्ति पद में पहुँच जावेगा।

९०—सतगुरु यह परचा दिया। कोई बिरले खोज कराय।

अर्थ

सतगुरु ने इस तरह से सच्चे प्रेमियों को, उनके घट में, परचे दिये। सो इस बात को सुन कर कोई बिरले जीव उसके खोज और तलाश में लगेंगे।

१२—अंतरमुख जो शब्द में । लेंगे बूझ बुझाय ।

अर्थ

और जो अपने अंतर में शब्द का अभ्यास करेंगे, वही इस कैफ़ियत को समझेंगे और अपने घट में निरख और परख कर बूझेंगे ।

१२—राधास्वामी कह दिया । तुम लेना शब्द कमाय ।

अर्थ

इस वास्ते सतगुरु राधास्वामी दयाल, सब जीवों को पुकार कर, कहते हैं कि हे भाइयों ! शब्द की कमाई करो और अपने घट में रस और आनन्द लो, और दया और मेहर के परचे देखो ।

बचन ६

राधास्वामी मत करनी का है, सिर्फ़ विद्या और बुद्धि के समझ और विचार का नहीं है

१—राधास्वामी मत करनी का है, निरी समझ-बूझ और बातों का मत नहीं है । जिस किसी को कि सच्चा

फ़िक्र अपने जीव के कल्याण का है और जनम-मरन का दुख और देह धर कर जो दुख-सुख सहना पड़ता है, उसका खोफ़ दिल में आया है, और अपने सच्चे मालिक माता-पिता की माहिमा को सुन कर, दर्शनों का सच्चा दर्द मन में पैदा हुआ है, उसी से थोड़ा बहुत अभ्यास, उस जुक्ति यानी सुरत-शब्द मार्ग का, जो वास्ते प्राप्ति सच्चे उद्धार के, राधास्वामी दयाल ने उपदेश की है, बन पड़ेगा। और उसका फ़ायदा अंतर में थोड़ा बहुत मालूम होता जावेगा, जिससे शोक़ कमाई करने का और प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती जावेगी।

२—जो ऐसे जीव राधास्वामी मत में शामिल होवें, उनको पहिले इन पाँच बातों का दुरुस्ती से समझ कर यक़ीन करना चाहिये।

३—पहली यह बात कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ और ऐन आनन्द और प्रेम स्वरूप हैं, और उनका धाम ऊँचे से ऊँचा है, जहाँ से कि उनकी अंस यानी धार अथवा किरनियों के वसीले से कार्रवाई कुल्ल रचना की हो रही है।

४—इसका सरासरी या ज़ाहिरा सबूत यह है कि इस देश की कुल्ल रचना और उसका पालन और ज़िन्दगी यानी ठहराव, सूरज की रोशनी और गरमी के आसरे है,

जो कि ब-निस्बत इस लोक के चैतन्य के, विशेष चैतन्य है। इसी तरह यह सूरज और उसकी रचना और उसका ठहराव दूसरे सूरज के आसरे है, जो इससे निहायत बड़ा और विशेष चैतन्य है, और जिसके गिर्द यह सूरज, मय सब अपने तारों यानी कुटुम्ब और परिवार के, घूम रहा है।

५—इस सूरज का नाम परमात्मा है। ऐसे ही परमात्मा-रूपी सूरज मय अपने सूरजों के (जो उसका कुटुम्ब और परिवार है) ब्रह्म-रूपी सूरज के गिर्द, जो त्रिलोकी नाथ है, घूम रहा है। और यह ब्रह्म-रूपी सूरज सत्तपुरुष स्वरूप निज सूरज की अंस है और उसी के आसरे उसकी कार्रवाई जारी है। और सत्तपुरुष कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के, जो सब के निज भंडार और सोत-पोत हैं, आधीन है।

६—यह हमारा सूरज और उसकी कार्रवाई इस आँख से नजर आती है। और परमात्मा-रूपी सूरज की मौजूदगी आकाशी रचना के इल्म वालों के बचन से, जिन्होंने बड़ी से बड़ी और उम्दा दूरबीन लगा कर जाँच करी है, साबित है। वह सूरज उन को दूरबीन से भी दिखलाई नहीं दिया, पर इस सूरज का उसकी तरफ़ चलना यानी उसके गिर्द घूमना अच्छी तरह से मालूम हुआ और उसके ऊपर ब्रह्म-रूपी सूरज का इशारा जोगीश्वरों ने किया है। और उसके परे के, दो स्थान सत्तपुरुष और राधास्वामी का भेद

संत और परम संतों ने खोल कर अपनी बानी और बचन में लिखा है। और वह दोनों धाम निर्मल-चैतन्य देश की हद में हैं। और ब्रह्म-रूपी सूरज ब्रह्माण्ड में है, जहाँ शुद्ध माया है। और आत्मा रूपी सूरज जो हमारा सूरज है और यह हमारा लोक, मलीन-माया के देश में है। जब कि तीन सूरज यानी आत्मा और परमात्मा और ब्रह्म स्वरूप का मौजूद होना किसी क़दर इस आँख से दीखता है, और कुछ नजूमियों और जोगीश्वरों के बचन से मालूम हुआ तो बाक़ी दो स्थानों का भेद और उनका मौजूद होना संतों के बचन के मुवाफ़िक़ मानना चाहिये। खुलासा यह कि यह रचना बराबर एक से एक बड़े की ताक़त और सम्हाल से हो रही है और ठहरी हुई है। तो जो इन सब में ऊँचे से ऊँचा और सब का आख़ीर है, वह सब का निज भंडार और कुल्ल मालिक और सर्व-समर्थ है और उसी का नाम राधास्वामी दयाल है।

७—इस वास्ते कुल्ल जीवों को, जो राधास्वामी मत में, वास्ते अपने जीव के उद्धार के, शामिल होवें, इस धुर पद राधास्वामी दयाल का निश्चय करके, और उसी धाम में पहुँचने का इरादा सच्चा और मज़बूत करके, जो जुगत सुरत-शब्द मार्ग की बताई जाती है, उसका अभ्यास प्रेम और अनुराग के साथ शुरू करना चाहिये। और जो कि और मत वाले इस धुर धाम तक नहीं पहुँचे और उन में

से कोई परमात्मा और कोई ब्रह्म तक पहुँच कर रास्ते में ठहर गये, इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासियों को, इन मतवालों की बातें सुन कर भूलना और भरमना या अपने अभ्यास में ढीले और सुस्त नहीं हो जाना चाहिये।

८—जो कि सर्व-ज्ञान और समझ-बूझ और सब तरह का रस और आनंद और सरूर, सुरत की धार के आसरे है, जो इन्द्रियों के वसीले से कुल्ल कार्रवाई पिंड में और उसके बाहर करती है, इस वास्ते जो सुरत का निज भंडार है, वह कुल्ल ज्ञान और आनन्द और प्रेम का भंडार है। और मालूम होवे कि कुल्ल रचना प्रेम के आसरे ठहरी हुई है। और प्रेम के ही वसीले से कार्रवाई कुल्ल रचना में हो रही है। यानी जहाँ और जिस काम में जिसकी थोड़ी बहुत मोहब्बत है, वह उसी जगह और उसी काम में तवज्जह और कोशिश करता है। और प्रेम से मतलब खैंच और मिलाव शक्ति से है, जिसको फ़ारसी में क़ुव्वते जाज़बा कहते हैं।

९—दूसरी यह बात कि सुरत या रूह या जीव-आत्मा राधास्वामी दयाल की अंस यानी धार है और उसका निज घर उनके चरनों में है।

१०—इस बात का सबूत ज़ाहिर है कि इस लोक में बल्कि कुल्ल रचना में दो वस्तुएँ—यानी चैतन्य और जड़-मौजूद हैं और चैतन्य ही की मदद से रचना होती है, और

उसी के संग उसका ठहराव है, और जब वह किसी पिंड को छोड़ देता है, तब उस पिंड के नाम और रूप का अभाव हो जाता है, तो कुल्ल रचना में सत्त और समर्थ वही चैतन्य यानी सुरत की धार है। जिस जगह यानी जिस पिंड में कि यह दाख़िल होती है या धार रूप होकर बीज से प्रकट होती है, वहीं कर्रवाई देह के बनाव और बढ़ाव और सम्हाल की जारी हो जाती है। और पाँचों तत्त्व और तीनों गुन जो कि कुल्ल रचना के मसाले के असली जुज़ यानी बड़े पदार्थ हैं, वहाँ हाज़िर और मौजूद हो कर और आपस में रल-मिल कर सुरत की धार की ताबेदारी में दुरुस्ती से उस कार्रवाई में मदद देते हैं। और जब सुरत की धार पिंड से खिंच कर अलेहदा हो जाती है, तब छिन-पल में देह की सूरत बदलती जाती है और थोड़े अरसे में उसका अभाव हो जाता है।

११—इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह सब रचना सुरत की धार के आसरे ठहरी हुई है, और इसी की शक्ति से प्रकट हुई, और इसके वियोग से उसका अभाव हो जाता है, तो इस अंस की ताक़त थोड़ी-बहुत वैसी ही हुई जैसी कि कुल्ल मालिक की ताक़त है। यानी जो चैतन्य कि इस लोक में और तमाम रचना में मौजूद है और सुरत यानी धार रूप होकर जुदा २ पिंड की सम्हाल कर रहा है और जिस के सबब से यहाँ और सब जगह रचना सत्त मालूम

होती है, वह उस महा चैतन्य कुल्ल मालिक की अंस है और जो जड़ पदार्थ नज़र आता है, वह माया की अंस है।

१२—तीसरी बात यह कि इस सुरत यानी जीव को अपने सच्चे माता-पिता और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सच्ची सरन लेकर कुल्ल कार्रवाई करना चाहिये, क्योंकि कुल्ल जीव यानी सुरतें राधास्वामी दयाल की अंस हैं, और अब उन्हीं के चरनों की धार से ताक़त लेकर हर एक पिंड में कार्रवाई कर रही हैं, फिर सब तरह से वह राधास्वामी दयाल की दया यानी चरनों की धार के आधीन हैं। इस वास्ते मुनासिव और लाज़िम है कि परमार्थी जीव अपनी करनी का अहंकार छोड़ कर, उनकी मौज और दया के आसरे काम करें, तो उसमें उनकी दया की भी परख आवेगी और इसका बंधन उन कामों में नहीं होगा या बहुत कम होगा और परमार्थी कार्रवाई में बहुत मदद मिलेगी और तरक्की भी जल्द होगी।

१३—इसका सबूत भी थोड़ा-बहुत इस बयान से ज़ाहिर होगा कि हर एक आदमी की देह और इंद्रियों और मन की कार्रवाई सुरत की धार के ऊपर मुनहसर यानी उसके आधीन है। यानी जब तक कि धार पिंड में न आवेगी और अंग २ में न फैलेगी, तब तक पूरी २ कार्रवाई देह की जारी न होगी। और यह धार ऊपर की धार से जो दसवें द्वार से

आती है, मदद लेती है और दसवें द्वार को दयाल देश से मदद मिलती है। इस तरह पर कुल्ल रचना सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की दया के आसरे ठहरी हुई है और कार्रवाई कर रही है। उनके चरनों की सरन लेना कोई नई बात नहीं है, क्योंकि असल में कुल्ल रचना उनकी सरन में है।

१४—और मालूम होवे कि कार्रवाई से यहाँ मतलब रचना की सम्हाल से है, और बाक़ी जीवों की कार्रवाई अपने २ अगले-पिछले और हाल के कर्म और बासना के अनुसार होती है और जैसा २ उसका फल है, वह भोगते हैं। पर जो जीव कि सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल की सरन में आये और मौज और दया के आसरे और भरोसे अभ्यास करने लगे, उनके पिछले कर्म आहिस्ता २ कटते जावेंगे, और प्रारब्ध कर्म का भोग दया से बहुत हलका हो जावेगा, और आइंदा को, जो कर्म ज़रूरी और वाजिबी राधास्वामी दयाल की मौज के आसरे करेंगे, उस में उनका बंधन नहीं होगा। इसी तरह से वे दिन २ निःकर्म होकर एक दिन धुर पद में पहुँच जावेंगे और उनका पूरा २ उद्धार हो जावेगा।

१५—चौथी बात यह कि राधास्वामी मत में जो अभ्यास, ध्वन्यात्मक नाम के सुमिरन और स्वरूप के ध्यान और शब्द के श्रवन का जारी है, उस से बेहतर

और सहज, और धुर पद में पहुँचाने वाली जुगत, और कोई, कतई नहीं है। जो कोई अपना सच्चा उद्धार चाहे, तो इसी अभ्यास को विरह और प्रेम अंग लेकर शुरू करे, तो एक दिन उसका काम बन जावेगा।

१६–मालूम होवे कि जो सुरत यानी रूह और जान की धार है, वही शब्द और नाम की धार है। जो कोई शब्द या नाम की धुन को सुनता हुआ चलेगा, वही सुरत या शब्द की धार को पकड़ के ऊपर चढ़ सकता है। और जो कि आदि में कुल्ल मालिक के चरनों से शब्द की धार प्रकट हुई, इस वास्ते, जो कोई शब्द की डोरी पकड़ कर चलेगा, वही कुल्ल रचना के पार होकर निज धाम में प्राप्त होगा और कुल्ल मालिक का दर्शन पावेगा। सिवाय शब्द की धार के और कोई रास्ता या जुगत या कोई धार ऐसी नहीं है कि जिसको पकड़ कर जीव धुर पद में पहुँच सके, क्योंकि और जो रास्ते और धारें हैं, वह माया के मंडल से निकसी हैं और उसी में लै हो जाती हैं।

१७–इस वास्ते हर एक सच्चे परमार्थी को चाहिये कि भेद शब्द का, और हाल स्थानों का, जो कि दरमियान धुर पद और जीव की बैठक के मुक़ाम के मुक़र्रर हुए हैं, दरियाफ़्त करके, एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्वरूप का ध्यान करता हुआ और शब्द सुनता हुआ चले। और इसी तरह सब मंज़िलें तै करता हुआ कुल्ल मालिक राधास्वामी

के चरनों में प्राप्त होवे। इस रीत से सच्चा उद्धार हासिल हो सकता है। और जितनी जुगतियाँ या तरीक़े और रास्ते हैं, वे सब माया की हद में ख़तम हो जाते हैं। इस वास्ते उनकी कमाई से पूरा उद्धार यानी सच्चा छुटकारा जनम-मरन से नहीं हो सकता है।

१८—पाँचवी बात यह है कि यह लोक और संसार हमारी सुरत का देश नहीं है, बल्कि मन और माया का देश है। इस सबब से सुरत यहाँ पर कई ख़ोल या देहियों में बैठ कर कार्रवाई करती है और कुछ अर्सा मुअइयना से, जिसको उम्र कहते हैं, ज़्यादा, नहीं ठहर सकती, और इसका पिंड में आना और उसको छोड़ कर चले जाना साफ़ नज़र आता है।

१९—निज देश सुरत का वही स्थान है जो कुल्ल मालिक का धाम है। इस वास्ते सच्चे परमार्थियों को मुनासिब है कि इस देश और इस देह में, मुवाफ़िक परदेसियों के बर्ताव रक्खें। यानी जैसे कि कोई आदमी परदेस में रह कर वहाँ के लोगों से मोहब्बत और व्यवहार पैदा करता है, और अपने आराम के लिये सब तरह का सामान भी जमा करता है, पर अपने वतन की याद और सुध नहीं भूलता है और जो असल पदार्थ हैं, उनको अपने देश में भेजता रहता है, और जब मौक़ा देश में जाने का मिलता है, तब बहुत ख़ुशी के साथ अपने वतन के

जाने को तैयार होता है और उन परदेसियों की मुहब्बत और वहाँ के सामान के छोड़ने का ज़रा भी दुख या अफ़सोस मन में नहीं लाता है।

२०—इसी तरह से प्रेमी और भक्त जन इस दुनिया के मोह और सामान में नहीं अटकते, और ज़रूरत मात्र मोहब्बत और व्यवहार दुनियादारों के संग में रखते हैं। और मुख्य प्रीत अपनी, अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में, और जिस क़दर बन सके कमाई वहाँ जल्द पहुँचने के लिये, करते रहते हैं, और अख़ीर वक़्त पर राधास्वामी दयाल की दया से सुखाले अपने घर को रवाना होते हैं।

२१—अब जानना चाहिये कि सच्ची सरन राधास्वामी दयाल के चरनों की, किसी को, बग़ैर प्राप्ति प्रीत और प्रतीत के, हासिल नहीं हो सकती और यह प्रीत और प्रतीत कोई दिन के अभ्यास से हासिल होगी। यानी जब कि परमार्थी जीव अभ्यास करके अपने घट में संत सतगुरु के बचन की निरख और परख कर लेगा, तब उसको सच्चा विश्वास और यक़ीन, राधास्वामी दयाल के घट २ में मौजूद होने, और उनकी सरन में आये हुए जीवों पर मेहर और रक्षा करने का, आवेगा और तब ही से कार्रवाई उद्धार की प्रकट जारी होना, समझना चाहिये।

२२—कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी बड़े दयाल

हैं। जो जीव कि सच्चे मन से सरल में आया, उसकी सम्हाल हर तरह से, अपनी मेहर से, आप फ़रमाते हैं और जब तक कि उसको दयाल देश में नहीं पहुँचावेंगे, तब तक उसको नहीं छोड़ेंगे। इस वास्ते, जो उनकी चरन-सरन और सतसंग में आये हैं उनको अपने मन में यक़ीन रखना चाहिये कि राधास्वामी दयाल उनके जीव का कारज एक दिन ज़रूर बनावेंगे और जब तक वह निज देश में न पहुँचें, तब तक उन के अंग-संग रह कर, उनकी हर तरह से सम्हाल और रक्षा और परमार्थ की तरक़्क़ी फ़रमाते रहेंगे।

बचन ७
संग का बयान

१—आदमी के मन की चाल-ढाल, स्वभाव, समझ और ख़्याल की गढ़त और बनाव, संग के ऊपर मुनहसर है। यानी जिस को जैसा संग शुरू में ज़बर मिला, उसी मुवाफ़िक़ उसकी रहनी और समझ, स्वभाव और ख़्याल और खान-पान और पहरने और ओढ़ने की आदत और उदारता और नम्रता या सूमता और अहंकारी अंग होगा।

२—कुल्ल जीवों के मन और इंद्रियों का मुख और इनका झुकाव संसार के पदार्थ और भोग और मान-बड़ाई

की तरफ़ हो रहा है और उन्हीं में वे रस पाते हैं और उन्हीं की प्राप्ति के निमित्त उम्र भर जतन और मेहनत करते हैं। और जब किसी की ऐसी ख़्वाहिश या जतन और तदबीर के पूरे होने में, या पदार्थों के भोगने में, कोई ख़लल डाले तो आपस में फ़ौरन बिगड़ जाते हैं। और इस क़दर अदावत पैदा हो जाती है कि फिर उसका दूर होना या मन से भूलना, बग़ैर किसी न किसी क़िस्म के एवज़ या बदला लेने के, मुश्किल बल्कि ना-मुमकिन हो जाता है।

३–जो कि सुरत यानी रूह का स्थान इस देह में मन और इंद्रियों के परे है और जिस क़दर उस की ताक़त है, वह मन और इद्रियों के वसीले से यहाँ ज़ाहिर होती है, इस वास्ते उसका भी झुकाव यानी मुख उलटा हो गया है, यानी मन और इन्द्रियों के संग बाहर के भोग और पदार्थों में उसकी आसा और मन्सा लगी रहती है और हमेशा बाहरमुख करनी में मशग़ूल रहती है।

४–सुरत की धार का मस्तक में ऊँचे देश से पिंड में उतरना, और अंग २ में ब-वसीले रगों के फैलना, और अख़ीर वक़्त पर उसी तरफ़ यानी मस्तक में ऊँचे देश को खिंच कर उलटना, हर एक को अपनी आँख से नज़र आता है। तो जिस क़दर जिस सुरत का झुकाव नीचे की तरफ़ पिंड में और बाहरमुख ज़बर है या जिस क़दर उसके मन का बंधन अनेक पदार्थों और जीवों में हो गया है,

उसी क़दर उसको आख़ीर वक़्त पर ऊपर को तरफ़ खिंचने और उलटने में दिक़्क़त और तकलीफ़ और मुश्किल होगी और इसी का नाम कष्ट और कलेश है, जो अकसर जीव मौत के वक़्त सहते हैं।

५—विशेष करके, सुरत का बंधन अपने तन में और फिर मन के संग, और फिर इंद्रियों के वसीले से पदार्थों में हो गया है। और पदार्थ के कहने में कुल्ल सामान खाने, पीने, पहिरने, ओढ़ने रहने और सहने और बर्तने का आ गया। और जो कि जुगान-जुग से यह सुरत मन और तन का संग करके भोगों में बर्तती चली आई है, इस सबब से तन, मन, और पदार्थों में ऐसी रच-पच गई है कि सिवाय इनके दूसरा ख़्याल नहीं उठता और इनका संग छोड़ने में निहायत डरती है और बड़ी भारी तकलीफ़ मानती है।

६—अब जब तक कि सुरत को संत सतगुरु या साध गुरु का संग (जो कि उस निज घर से जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं, वाक़िफ़ है) न मिलेगा और वह इसको अच्छी तरह से इसके निज घर का भेद और रास्ता और चलने की जुगत न समझावेंगे, और अपनी दया से इसके हिरदे में कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्ची प्रीत और प्रतीत और दर्शनों की चाह पैदा करके चलने का अभ्यास न करावेंगे, तब तक इसकी हालत और समझ-बूझ और ख़्याल और रहनी नहीं बदलेगी।

७—सिवाय संत सतगुरु या साध गुरु के, प्रेमी और भक्त जन का संग (जिनको सतसंगी और अभ्यासी भी कहते हैं) बहुत ज़रूर है कि उनके संग में बैठ कर जीव को, हाल, हर एक की प्रीत और शौक़ घर के चलने के अभ्यास का, मालूम होगा और यह कैफ़ियत देख कर और संत सतगुरु या साध गुरु के बचन-बानी सुन कर, इसके दिल में उनकी मेहर और दया से आप ही आप शौक़ करने कमाई का, और सहज में फिरने मन का, संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ से, और जोड़ने मन और सुरत का, शब्द और स्वरूप में, ऊँचे की तरफ़, अपने निज घट में, पैदा होकर, दिन २ (जिस क़दर अन्तर में रस और आनन्द मिलता जावेगा) बढ़ता जावेगा और बाहरमुख कामों में दिन २ तवज्जह हलकी और कम होती जावेगी।

८—यह तदबीर संग के बदलने की है। और जो कोई सच्चा होकर संतों के संग में लगेगा, उसकी हालत ज़रूर आहिस्ता २ बदलती जावेगी यानी उसके मन और इंद्रियां का रुख़ इधर, यानी संसार की तरफ़ से हट कर घट में चरनों की तरफ़ फिरता जावेगा, और जिस क़दर मेहनत और तवज्जह के साथ यह काम किया जावेगा, उसी क़दर उसका फ़ायदा दिन २ अंतर में मालूम होता जावेगा।

९—यही सबब है कि संतों और महात्माओं ने जीवों को समझाया है कि पहिले तन-मन और धन मालिक के

चरनों में भेंट करो। हरचन्द कि यह तीनों चीजें दात और बख़्शिश उसी कुल्ल मालिक की हैं, पर जीवों ने उनमें ऐसा अपनपौ यानी अपना क़ब्ज़ा और दख़ल पैदा किया है कि उनके छोड़ने में निहायत ही तकलीफ़ और दुख मानते हैं। पर परमार्थी जीव को सतसंग करके, इस क़दर विचार करना ज़रूर और मुनासिब है कि जब तक उसकी प्रीत और लाग तन, मन और धन में ज़बर रही आवेगी, तब तक मालिक के चरनों की प्रीत का घट में प्रकट होना मुश्किल है। इस वास्ते जिस क़दर परमार्थी की लाग, इन तीनों में से, उनको नाशमान और दुखदाई समझ कर, आहिस्ता २ कम होती जावेगी, उसी क़दर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत जागती जावेगी और उसी मुआफ़िक़ अंतर में सहारा यानी रस और आनन्द भी मिलता जावेगा।

१०—जब कि सुरत का भंडार यानी कुल्ल मालिक़ राधास्वामी दयाल का देश अंतर में है और उसका रास्ता भी नेत्रों के स्थान से अंतर में चलता है, तो फिर जिस क़दर बाहरमुख करतूत है, वह सिवाय ज़रूरी और वाजिबी के, जीव को भटकाने और भरमाने वाली है। अलबत्ता संत और साध का संग, या उनकी बानी और बचन, और अभ्यासी प्रेमी और भक्तों का संग, जिनका ताल्लुक़ अंतर के भेद और रास्ते की चाल से लगा हुआ है, अंतर की

कमाई और करनी का मददगार है। हरचन्द यह बाहर-मुख काम है, पर अंतर की कार्रवाई से बिलकुल मिला हुआ और उसका बढ़ाने वाला है। इस वास्ते यह संग जब कभी भाग से मिल जावे, तो उसको निहायत ग़नीमत समझना चाहिये, और जब २ मौक़ा मिले, उसमें शौक़ के साथ चल कर शामिल होना चाहिये।

११—सच्चे परमार्थियों को मुनासिब और लाज़िम है कि अपने मन और सुरत को परमार्थी काम में अपने घट में लगाने के वास्ते, जहाँ तक मुमकिन होवे, संसारी और बाहरमुख जीवों का संग कम करें, और बाहरमुख करतूत जो फ़िज़ूल और ना-बाजिब है, कम करते जावें, और चित्त से भी ऐसे ख़्यालों को हटाते जावें, तो उनका रास्ता परमार्थ की कमाई का, अपने अंतर में सुखाला और निर्विघ्न चलेगा।

१२—सिवाय संतों और उनकी बानी और बचन के संग के, और जिस क़दर करतूत परमार्थी शकल में लोग बाहरमुख करते हैं, उसमें, जीव के उद्धार का कुछ फ़ायदा नहीं है। अलबत्ता शुभ कर्म का फ़ायदा यानी थोड़े दिनों का सुख इस लोक में या मरने के बाद किसी ऊँचे लोक में मिल जावेगा। और जिस किसी ने प्रेम-पूर्वक और सच्चे मन से मालिक के प्रसन्न करने के निमित्त कोई काम किया होगा, तो उसको, उसके एवज़ में, संत सतगुरु का दर्शन

मिलेगा और उनसे, सच्चे मालिक से मिलने की, अंतरमुख अभ्यास की जुगत मिलेगी और रफ़्ता २ एक दिन उसका काम बन जावेगा।

सार बचन छंदबंद, बचन ४१, शब्द नम्बर १३ के अर्थ लिखे जाते हैं

१—सोधत सुरत शब्द धुन अंतर, घटत तिमिर नभ बासी।

अर्थ

अभ्यासी सुरत शब्द धुन, छाँट कर, पकड़ती हुई नभ में पहुँची और नीचे के अंधकार से न्यारी हो गई।

२—चमकत चाप धनुष गत न्यारी, कंज जोत छिटकत उजियासी।

अर्थ

इस तौर से तीर की भाल के मुवाफ़िक़ चमकती हुई, तीसरे तिल से, जो कि धनुष स्थान है, पार होकर, जोत का प्रकाश देखने लगी। (धनुष स्थान इस सबब से कहा कि दोनों आँखों से धारें, कमान के मुवाफ़िक़, मिलती हैं)।

३—गगन गंग धारा उठ धावत, होत जहाँ निरमल गत स्वाँसी।

अर्थ

अब वहाँ से (अर्थात सहसदलकँवल से) सुरत की धार, जो कि गंगा की धार है, गगन की तरफ़ को दौड़ी जहाँ पहुँच कर प्राण निर्मल होते हैं।

४—जमुना तीर श्याम खुल खेलत, गोप गूजरी करत बिलासी।

अर्थ

और रास्ते में, यमुना के किनारे (अर्थात बाईं तरफ़), मन, खुल कर, सैर करता जाता है और सुरत भी उसके बिलास को देखती जाती है। (गोपी रूप गूजरी अर्थात सुरत जो इंद्रियों से न्यारी हो गई है)।

५—जसुधानंद कंस रिपु सुन्दर, धमक सुनत तज आसी।

६— घूमत अधिक धधक धुन धावत, पावत काल तरासी।

अर्थ

और वही मन जो कि कृष्ण है ऊपर की आवाज़ सुन कर जगत की आस छोड़ कर निहायत धूम-धाम के साथ धुन की धधकार पकड़ कर ऊपर को दौड़ता है और काल मुरझाता जाता है।

७—बिमल नगर जहाँ घोर अखाड़ा, खोजत रही नाम गति पासी।

अर्थ

चढ़ते २ सुरत, बिमल नगर (अर्थात सुन्न) में जहाँ हंसों के अखाड़े जमा हैं, पहुँची और नाम की गति वहाँ खोज कर अच्छी तरह से पहिचानी।

८—मीन मानसर भँवर कंज पर, भृङ्गी होत समझ गुण तासी।

अर्थ

फिर सुरत मछली की तरह मान-सरोवर में और भँवर की तरह गुफा में सैर करती हुई सत्तलोक में पहुँच कर भृंगी अर्थात सतगुरु स्वरूप की गति को प्राप्त हुई।

९—राधास्वामी उठत धाम धुन, बैठ मगन अविनासी।

अर्थ

और वहाँ से राधास्वामी धाम में, राधास्वामी धुन सुनती हुई, पहुँच कर सुरत मगन हो गई और अविनाशी रूप होकर वहाँ विश्राम किया।

———

वचन ८

सब जीवों को जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, अपने निज घर और सच्चे माता-पिता की सुध लेकर चलने और उनके चरनों में पहुँचने का जतन करना चाहिये।

१—इस दुनिया में हर एक शख़्स के मन में, अपने घराने और बाप-दादे की बड़ाई का बड़ा ख़्याल और मान रहता है। फिर जब कि यह बात मालूम हुई (कि हम सब पुरुष और स्त्री) कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे यानी पुत्र और पुत्री हैं, तब किस क़दर ख़ुशी और शान्ति हमारे मन में, अपने ऊँचे कुल और सच्चे माता, पिता राधास्वामी दयाल की बड़ाई की, पैदा होनी चाहिये कि जिसके सामने, और ख़ुशी और मान सब ओछे नज़र आवेंगे।

२—जब इस बात का कि हम सब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के बाल-बच्चे हैं, थोड़ा बहुत यक़ीन दिल में आवेगा, तब ज़रूर हमारे मन में कुल्ल जीवों की तरफ़ थोड़ा बहुत प्यार बहिन-भाई के मुवाफ़िक़ पैदा होगा। और चाहे ज़ाहिर में उसका बर्तावा हर एक से हर वक़्त और हर जगह इस समझ के मुवाफ़िक़ न हो सके, पर मन में

ख़्याल, इसी क़िस्म के प्यार का, थोड़ा-बहुत ज़रूर रहेगा। और दिल से वह शख़्स हर एक का हितकारी बना रहेगा, और अपने मतलब के वास्ते या बग़ैर ज़रूरत ख़ास के (जिस में बहुत से जीवों का आराम और फ़ायदा नज़र आवे) किसी को मन और बचन और कर्म करके नुक़सान या तक़लीफ़ पहुँचाने का इरादा न करेगा।

३—सिवाय इसके जब ऐसा शख़्स (कि जिसने अपने तईं और सबको राधास्वामी दयाल का बाल-बच्चा समझा है) संत और महात्माओं की बानी और बचन पढ़ेगा या सुनेगा या संत सतगुरु या साध गुरु के सन्मुख पहुँच कर उनके दर्शन करेगा, तो ज़रूर उसके दिल में यह इरादा पैदा होगा कि जहाँ तक बने, और जिस तरह हो सके, अपनी चाल-ढाल और रहनी और समझ-बूझ ऐसी दुरुस्त करे कि जिस में सच्चे माता-पिता राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु प्रसन्न होकर इस पर दया करें, और अपने चरनों में लगावें, और इसको ऐसी ताक़त बख़्शें कि दिन २ इसके संसारी अंग और हालत बदल कर परमार्थी रंग गहरा और पक्का चढ़ता जावे।

४—ऐसे शख़्स पर कुल्ल मालिक और संत सतगुरु ज़रूर दया फ़रमावेंगे यानी उसके मन में परमार्थ और उसकी कमाई करने का शौक पैदा करके उसका मेल सतसंग से लगा देंगे, जहाँ कि वह सच्चे परमार्थ यानी

प्रेमा-भक्ति की रीत और बर्तावा समझ कर और सच्चे और कुल्ल मालिक का महिमा और भेद सुन कर, सुरत-शब्द मार्ग की कमाई में (जो कि संतों की निज जुगत, वास्ते पहुँचाने जीवों के निज घर में है) लग जावेगा। और दिन २ बिकारी अंग और स्वभावों को छोड़ता हुआ, निर्मल होकर, एक दिन अपने सच्चे माता-पिता के चरनों में पहुँच जावेगा।

५—जैसे यह शख़्स संत सतगुरु की दया लेकर अभ्यास करता जावेगा, उसी क़दर उसको अन्तर में मेहर और दया के परचे मिलते जावेंगे, जिससे इसके मन में यक़ीन कुल्ल मालिक की बड़ाई और समर्थता और उसके घट में और हर एक जगह मौजूद होने का, बढ़ता जावेगा। और उसके साथ प्रीत भी चरनों में दिन २ बढ़ती जावेगी। और नित्त नई उमंग और प्रेम घट में जागता जावेगा कि जिसके सबब से कुल्ल मालिक और संत सतगुरु के चरनों में प्यार और भाव और कुल्ल जीवों की तरफ़ दया-भाव बढ़ता जावेगा और शुभ अंग और स्वभाव आप ही आप उसके मन में पैदा होते जावेंगे। और प्रेमी और भक्त जन और साध जन महा प्यारे लगेंगे। और उनकी और सतगुरु की सेवा और ख़िदमत करने को मन में नई नई उमंग पैदा हागी।

६—मालूम होवे कि दुनिया में भी जब किसी की

शादी होती है, तब पुरुष और स्त्री को आपस में किस क़दर प्यार और अपनी ससुराल वालों में कैसी मुहब्बत और उनको राज़ी रखने की किस क़दर चाह मन में फ़ौरन पैदा हो जाती है ? फिर जो परमार्थ में किसी को इस बात का यक़ीन हुआ कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ और सब जीवों के सच्चे माता-पिता हैं और सब जीव उनके निज बच्चे हैं, तो जो उसके मन में राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में (जो उनके निज भेदी और उनसे मिलाने वाले हैं) प्रीति और भाव जागा और कुल्ल जीवों की तरफ़ दया भाव पैदा हुआ, तो यह कुछ अचरज की बात नहीं है। बल्कि ऐसी हालत का पैदा होना, फ़ौरन वक़्त आने यक़ीन के, ज़रूर चाहिये, क्योंकि यह निशान और सबूत यक़ीन का है। और जो ऐसी हालत न होवे तो जानना चाहिये कि उसके यक़ान में किसी क़दर कसर है।

७—जब कोई लड़का वर्ष-दो वर्ष का है और उस वक़्त उसका बाप वास्ते नौकरी या सौदागरी के विदेश में चला गया और बहुत अर्से तक घर पर न आया, तो जब वह लड़का होशियार हुआ और अपनी माँ से हाल अपने बाप का सुना, तो उसी वक़्त उसको मोहब्बत बाप की तरफ़ पैदा हुई, और उससे मिलने का शौक उसके दिल में जागा। इसी तरह जो जीव कि, काल और माया के पैदा

किये हुये पदार्थों में इस दुनिया में लिपट रहे हैं और अपने निज माता पिता और निज घर से बिलकुल बे ख़बर हैं, फिर जब संत सतगुरु (कि जो भेदी उस घर के हैं और, सच्चे माता-पिता के मुवाफ़िक़ जीवों का हित दिल में रखकर उनके उद्धार के निमित्त इस दुनिया में आते हैं) भाग से मिले, और उन्होंने भेद और महिमा कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सुनाई, उसी वक़्त उन जीवों के मन में प्यार और भाव और शौक़ दर्शन राधास्वामी दयाल का जाग उठता है। और उसी दिन से वह उस जतन में लग जाते हैं कि जिसकी कमाई करके एक दिन अपने निज घर यानी राधास्वामी धाम में पहुँच जावें।

८—ऐसी प्रीत और प्रतीत का जागना कोई अचरज की बात नहीं हैं। पर संत सतगुरु के बचन में प्रतीत होनी चाहिये और नहीं तो हालत मन की फ़ौरन नहीं बदलेगी। अलबत्ता कोई दिन सतसंग करके और बचन बारम्बार सुन कर और अभ्यास करके और कुछ परचे अंतर में पाकर प्रेम जागता जावेगा और आहिस्ते २ एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

९—अब समझना चाहिये कि जिन जीवों के मन में इस दुनिया का हाल देख कर ऐसा ख़्याल पैदा हुआ कि यह देश ठहराऊ और हमारा नहीं है, और यहाँ के सुख, तुच्छ और नाशमान हैं, और जो कोई कुल्ल रचना का

करता है, वह कहाँ है और कैसे मिल सकता है, और कोई देश ऐसा भी ज़रूर होना चाहिये कि जो अमर हो, और जहाँ का सुख और आनन्द भी सब सुखों का भंडार और अमर हो, और इन सब बातों के दरियाफ़्त करने का शौक़ और खोज हर वक़्त दिल में लगा रहता है, सो जब इन जीवों की दर्शन संत सतगुरु या साध गुरु का मिलेगा, और वे भेद कुल्ल मालिक और निज घर का और जुगत चलने की समझावेंगे, तब वे फ़ौरन प्रतीत उनके बचन की करके, अभ्यास में लग जावेंगे और उनके मन में प्रीत सच्चे मालिक और निज धाम की जाग उठेगी, और वे संत सतगुरु (जो कि भेद देने वाले और पहुँचाने वाले उस घर के हैं) और प्रेमी जन के साथ निहायत दीनता और मोहब्बत करेंगे, और इस दुनिया से किसी क़दर बरदाश्ता ख़ातिर, यानी उदास होकर, अपने निज घर की तरफ़ चलने की जिस क़दर बन सकेगा, कोशिश करेंगे। ऐसे ही जीवों का नाम सच्चा परमार्थी है और उन पर दिन २ कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया बढ़ती जावेगी।

१०—इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो फ़िक्र और विचार और ग़ार के साथ काम करते हैं, और आँख खोल कर दुनिया के करोबार की जाँच करते हैं, मुनासिब है कि इसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई करें। यानी सन्त सतगुरु या साध

गुरु का खाज करके उनसे सब भेद दरियाफ़्त करें, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की प्रीत और प्रतीत हिरदे में बसा कर, घर चलने का जतन और अभ्यास शुरू करें, तो एक दिन राधास्वामी दयाल की दया से घर में पचहुँ कर अमर और पूर्ण आनंद को प्राप्त होंगे।

११—बड़े अफ़सोस की बात होगी जो कोई संत सतगुरु के बचन की प्रतीत न लाकर, संसार में ही, माया के पदार्थों में लिपट कर, भरमता रहेगा और अपने सब से बड़े घराने और सच्चे माता-पिता, कुल्ल मालिक का ख़्याल न करके, मन और इंद्रियां के हुक्म में बर्त कर, जनम-मरन और देहियों के दुख-सुख भोगता रहेगा। सिर्फ़ नर देही में, जतन घर की तरफ़ चलने का, बन सकता है और इस वास्ते ऐसे मौक़े को मुफ़्त खो देना और अपने जीव के कल्याण के निमित्त कोई जतन न करना, निशान अभागता का है। क्योंकि समझने और निर्णय करने वाली बुद्धि और अभ्यास करने की ताक़त पाकर जिस किसी ने कि उससे फ़ायदा न उठाया, तो वह आत्मघाती हुआ, यानी उसने अपने जीव का आप ही नुक़सान किया।

१२—बचन नम्बर ६ में थोड़ा बहुत सबूत इन पाँच बातों का दिया गया है कि (१) राधास्वामी दयाल सर्व-समर्थ और कुल्ल मालिक हैं और (२) सुरत या जीव उनकी अंस यानी बालक हैं और (३) सिवाय सुरत-शब्द

मार्ग के और कोई रास्ता सहज और धुर पहुँचाने वाला नहीं है और (४) जो जीव उनकी सरन लेकर अभ्यास में लगेंगे, वही आहिस्ता २ एक दिन उनके चरनों में पहुँच कर परम आनंद को प्राप्त होंगे और (५) यह दुनिया बेगाना, यानी माया का, देश है, और जो जीव यहाँ रहेंगे, वह जनम-मरन और देही के दुक्खों से बच नहीं सकते। अब जीवों को चाहिए कि इस बचन की थोड़ी बहुत प्रतीत करके अभ्यास में लगें, तो वे एक दिन निज घर में पहुँच कर हमेशा को सुखी हो जावेंगे, नहीं तो वे माया देश के में अपने कर्मों के मुवाफ़िक़ नीच-ऊँच योनि और स्थानों में भरमते रहेंगे।

१३—हर एक को अपने असली नफ़े और नुकसान का विचार करके इस ज़िंदगी में काम करना चाहिए, नहीं तो बहुत पछताना और अफ़सोस करना पड़ेगा और जब वक़्त हाथ से जाता रहा, फिर वह पछताना फ़ायदेमंद न होगा।

बचन ९

परमार्थी को सतसंग में और सतगुरु के सन्मुख परमार्थ की रीत और कायदों के मुवाफ़िक़ बर्ताव करना चाहिए।

१—हर एक आदमी जब जो काम करता है या जैसी सोहबत में जाता है, तो उसी काम और सोहबत का रूप धारन करके, जो क़ायदे उस काम या सोहबत के मुक़र्रर हैं, उन्हीं के मुवाफ़िक़ बर्ताव करता है। जैसे विद्यार्थी जब स्कूल या पाठशाला में जाता है, तब वहाँ लिखने पढ़ने ही का काम करता है और दूसरा काम वहाँ पर नहीं करता। और इसी तरह से कचहरी वाले जब कचहरी में जाते हैं, तब वहाँ की पोशाक पहन कर जो कार्रवाई कचहरी की है, सिर्फ़ वही काम करते हैं।

२—इसी तरह पर जो कोई परमार्थ का चाहने वाला है, उसको मुनासिब है कि जब गुरु या साध के सन्मुख या उनके सतसंग में जावे, तो वाद विवाद छोड़ कर, चित्त से होशियारी के साथ बचन सुने और उनका मनन करे, और भाव के साथ दर्शन करे, और अंतर और बाहर, परमार्थ के क़ायदे यानी भक्ति की रीत के मुवाफ़िक़ बर्ताव करे। यानी बाहर से इन्द्रियों को किसी क़दर रोके और एहतियात रक्खे कि अंतर में सिवाय परमार्थी ख़्यालों के संसारी तरंगें न उठावे और गुरु और साध का थोड़ा बहुत उसी क़दर भय और भाव करे जैसे कि अपने बाप-दादे और बुज़ुर्गों का या जैसे अपने हाकिम का, क्योंकि वे परमार्थ के सच्चे बुज़ुर्ग और सच्चे हाकिम हैं।

३—जो जीव इस क़ायदे के साथ सच्चे गुरु के

सन्मुख जावेगा, वह ज़रूर थोड़ा-बहुत परमार्थ का लाभ यानी फ़ायदा लेकर उठेगा। और जो इसी तौर पर सतसंग में उसकी हाज़िरी कुछ अर्से तक बराबर जारी रही, तो उसके मन की हालत ज़रूर थोड़ी-बहुत बदलेगी और सच्चे मालिक के चरनों का प्रेम उसके हिरदे में पैदा होकर दिन २ बढ़ता जावेगा।

४—सच्चे परमार्थी को कभी अगली-पिछली टेक और अटक में भरमना नहीं चाहिए, और सतगुरु के सन्मुख अपनी समझ-बूझ या अपने ख़्याल, परमार्थ की निस्बत, ज़ोर देकर पेश करने नहीं चाहिए, बल्कि अपने तईं अनजान समझ कर जो बचन कि सतगुरु निर्णय करके समझावें, उनको हित-चित से धारन करना चाहिए।

५—जो कोई हाकिम-ए-वक़्त या डाक्टर या हकीम के पास जाता है, तो वह अपनी नौकरी या मुक़दमे की बाबत या अपनी बीमारी का हाल कहता है, और जो हुक्म कि हाकिम देवे और जो दवा और परहेज़ कि डाक्टर तजवीज़ करे, उसके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करता है। वहाँ हाकिम या डाक्टर की ज़ात-पाँत या उनकी बाहर या अंतर की रहनी पर नज़र नहीं करता। इसी तरह जो कोई सच्चा परमार्थी है, उसको लाज़िम है कि साध-गुरु के बचन और उनके अभ्यास की परख करे, और ज़ात-पाँत और लक्षण वग़ैरा के ख़्याल में न पड़े। क्योंकि इसकी क्या ताक़त है कि यह

जो आप माया में ग़ोते खा रहा है, ऐसे लोगों की, जो कि मन और माया से किसी क़दर या बिलकुल न्यारे हैं, परख या जाँच कर सके। पर जो कोई दिन उनका संग करेगा तो अलबत्ता थोड़ी-बहुत निरख और परख आवेगी, यानी उनकी पहिचान इस बात की थोड़ी कर सकेगा कि वे किस क़दर संसार से जुदे हैं।

६—सच्चे परमार्थी को लाज़िम है कि सतसंग में जाकर अपना काम करे और उसी का फ़िक्र रक्खे और दूसरे परमार्थियों की तरफ़ न देखे, और न उन के मुआमले में दख़ल देवे। लेकिन जो अपने से भक्ति में विशेष यानी परमार्थ की कार्रवाई में बेहतर नज़र आवे, तो उसकी चाल आप भी इख़्तियार करे, और जो मौक़ा होवे और बन सके तो उससे मदद लेवे।

७—और यह भी मुनासिब है कि जिस क़दर अपना शौक़ और उमंग होवे, उसको कम करके दिखलावे और ज़्यादा दिखावा उसका न करे और अपनी ताक़त से ज़्यादा काम, बग़ैर अच्छी तरह सोचे और समझे हुए, न करे, नहीं तो थोड़ा-बहुत रास्ते में झटका लगेगा। उसको चाहिये कि जो काम करे समझ और सोच कर, धीरज के साथ, करे और जितनी अपनी ताक़त होवे, उससे कुछ कम, काम में लावे और घबराहट के साथ जल्दी न करे, तो उसका रास्ता सुखाला चलेगा। खुलासा

यह है कि हिरसा-हिरसी और देखा-देखी भारी काम परमार्थ के, एकाएक न कर उठावे क्योंकि आहिस्ता २ चाल चलने से उन्हीं कामों को यह दुरुस्ती के साथ कर सकेगा। अपनी भक्ति और प्रेम को नित्त बढ़ाता जावे। उसके साथ इसकी ताक़त भी बढ़ती जावेगी।

८—सच्चे परमार्थी को यह भी मुनासिब है कि किसी दूसरे सतसंगी से, जो सतसंग में शामिल होवे, किसी बात पर तकरार और हुज्जत या लड़ाई या झगड़ा या बैर और विरोध और ईर्षा न करे, नहीं तो उसके प्रेम और भक्ति में मुफ़्त ख़लल पड़ेगा और तरक़्क़ी में हर्ज होगा। जो किसी का चाल-चलन इसको पसन्द न होवे, या उसकी रहनी में नुक़्स और कसर नज़र आवे, तो मुनासिब है कि उसको प्रीत-भाव के साथ एकान्त में समझौती देवे, और जो वह न माने, तो सतगुरु या साध से, जो सतसंग के अधिष्ठाता हैं, इत्तला कर देवे। उनको इख़्तियार है, चाहे जैसे उस शख़्स के साथ बर्तावा करें। इस शख़्स को चाहिये कि फिर उस सतसंगी के मुआमले में दख़ल न देवे और जो इसका मन उससे मिलने और बात करने को न चाहे तो उससे मिलना और बोलना छोड़ देवे। फिर विरोध न करे और न इस बात की हठ करे कि वह सतसंग से ख़ारिज कर दिया जावे। क्योंकि जो वह सतसंग में पड़ा रहा, तो शायद आहिस्ता २ गढ़ जावेगा और विकारी अंग

उसके साफ़ हो जावेंगे और जो सतसंग से ख़ारिज हुआ तो और कहीं उसकी गढ़त होनी मुमकिन नहीं है।

९—सच्चे परमार्थी को लाज़िम है कि जो कोई चाल सतगुरु या सतसंग की उसकी समझ में न आवे, और ज़ाहिरा उसको ना-पसंद या ना-मुनासिब मालूम होवे, तो उसकी निंदा यानी बुराई किसी सतसंगी या संसारी जीवों के सामने न करे, और न अपने मन में उसको बुरा समझे और ऐसा यक़ीन करे कि उस कार्रवाई में ज़रूर कुछ न कुछ मसलहत होगी कि जिससे फ़ायदा ख़ास या आम, या दोनों ख़ास और आम परमार्थी लोगों का मंजूर है।

१०—जो उसका मन इस बात को न माने और भरम उठावे, तो बेहतर होगा कि किसी गहरे प्रेमी सतसंगी से उस का हाल एकान्त में दरियाफ़्त करे, या जो मौक़ा मिले तो ख़ुद सतगुरु से बिन्ती करके पूछ लेवे तब उसका संदेह रफ़ा हो जावेगा।

११—मालूम होवे कि जहाँ कहीं संतों का सतसंग जारी होता है, वहाँ सच्चे परमार्थ का निर्णय करके उसके प्राप्ति की जुगत समझाई जाती है और वह जुगत ठीक २ उन्हीं लोगों से कमाई जावेगी कि जिनके हिरदे में अपने जीव के सच्चे उद्धार और सच्चे मालिक के दर्शनों की ज़बर चाह है, और जिन के मन में संसार की चाहें ज़बर हैं और परमार्थ का ख़्याल थोड़ा है, उनसे वह जुगती शुरू

में दुरुस्ती के साथ नहीं कमाई जावेगी। लेकिन जो सतसंग और अभ्यास बराबर करते रहेंगे, तो कोई दिन में संसार की चाहें हलकी हो कर, परमार्थ की चाह उनके मन में भी ज़बर हो जावेगी, और फिर अभ्यास में उनको भी रस और आनंद मिलना शुरू हो जावेगा।

१२—लेकिन निपट संसारी जीवों से संतों के सतसंग में ठहरा नहीं जावेगा, और न वहाँ के बचनों के सुनने और समझने की ताक़त और बरदाश्त होगी। इस वास्ते कोई २ चालें सतसंग में ऐसी जारी की जाती हैं कि जिनको देख कर और सुन कर संसारी जीव सतसंग में आकर ख़लल न डालें और सच्चे परमार्थियों पर अपने संग और संसारी बातों की छाया डाल कर, उनके अभ्यास में विघ्न-कारक न होवें।

१३—ऐसी चाल के जारी होने में परमार्थियों के प्रेम की तरक़्क़ी होती है और निपट संसारी लोग नज़दीक नहीं आ सकते। दूर ही दूर से अपनी अन-समझता से निंदा करते हैं और झूठों को सतसंग से हटाते हैं।

१४—सच्चे सतसंगियों में आपस में प्यार और मोहब्बत ज़रूर होवेगी। क्योंकि जब उन सब का एक ही मतलूब और माशूक़ है, और सिर्फ़ उसके मिलने की चाह हर एक के मन में ज़बर है, और हर एक अपने २ मुवाफ़िक़ उस एक ही काम के पूरा करने के लिये, जिस क़दर बन सके,

मेहनत और कोशिश कर रहा है, तो इन सब का आपस में मेल और इत्तफ़ाक़ ज़रूर होगा और एक-दूसरे को मदद देने के वास्ते हमेशा तैयार रहेगा। और जिस २ में ऐसा मेल नहीं है, तो समझना चाहिये कि उन लोगों की कार्रवाई और मतलब में कुछ न कुछ कसर है। पर जो वह सतसंग में पड़े रहेंगे और थोड़ा बहुत अभ्यास करे जावेंगे, तो आहिस्ता २ एक दिन उनकी भी सफ़ाई हो जावेगी।

बचन १०

संतों के बचन हरचंद अधिकारी-प्रति हैं, पर कुल्ल जीवों को अपनी २ ताक़त के मुवाफ़िक़ उनका मानना और उनके मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और बरतावा दुरुस्त करना ज़रूर चाहिये॥

१—संतों ने जिस क़दर बानी और बचन कहे हैं, वह सब उत्तम अधिकारी यानी लायक़ परमार्थी जीवों के वास्ते कहे हैं, और उन्हीं की समझ में वे ज्यों के त्यों आवेंगे, और उन्हीं जीवों से उनकी कार्रवाई यानी अभ्यास दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगा।

२—और जो जीव कि मध्यम दरजे के अधिकारी हैं, वह

भी उन बचनों को समझेंगे और मानेंगे, पर उनसे कार्रवाई आहिस्ता २ बनती जावेगी और सतसंग और अभ्यास करते २ कोई दिन में वे भी उत्तम अधिकारी हो जावेंगे।

३—और निकृष्ट अधिकारी, यानी जो तीसरे दरजे के जीव हैं, वे कोई दिन सतसंग करके बचन के समझने के लायक़ होवेंगे और फिर आहिस्ता २ अभ्यास शुरू करेंगे। पर कुछ अर्सा चाहिये कि उनसे अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़े।

४—और जो चौथे दरजे के जीव हैं, जिनको पामर और नीच कहते हैं वे निपट संसारी और कर्मी और अहंकारी हैं। वे संतों के सतसंग में नहीं आवेंगे, और जो किसी सबब से आ गये तो ठहर नहीं सकेंगे और न अभ्यास में शरीक होंगे।

५—संतों की दया और समर्थता भारी और अपार है। वे जिस क़िस्म के जीवों को चाहें, चरनों में लगा कर, अपनी प्रति की बख़्शिश कर सकते हैं। पर आम दस्तूर और क़ायदा यही है जैसा कि ऊपर लिखा गया।

६—कोई जीव चाहे उत्तम अधिकारी होवें, चाहे मध्यम या निकृष्ट, बिना दया संतों के कुछ कार्रवाई परमार्थ की दुरुस्ती के साथ नहीं कर सकते। इस वास्ते सब जीवों को चाहिये कि जैसे बने, तैसे संत सतगुरु के सन्मुख आवें

और जैसी-तैसी सरन उनके चरनों की लेवें, तो अल-बत्ता उनका परमार्थ का भाग जागना शुरू हो जावेगा, और रफ़्ता २ संतगुरु की दया के बल से कमाई करके, एक दिन पूरा काम बन जावेगा। हर तरह से महिमा संत सतगुरु की है और बिना उनकी दया के किसी जीव का सच्चा उद्धार नहीं हो सकता है।

७—बचन नम्बर ८ और ९ की क़दर और समझ प्रेमी जीव जानेंगे, और वे ही उन बचनों के मुवाफ़िक़ थोड़ी-बहुत क़ार्रवाई करके, अपने घट में रस और आनन्द पावेंगे, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा और उनके चरन कँवल की प्रीत और प्रतीत उन जीवों के हिरदे में दिन २ बढ़ती जावेगी। और बाक़ी जीव उन बचनों को पढ़ कर थोड़ी-बहुत समझ-बूझ हासिल करेंगे। पर उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई उनसे पूरे तौर पर बिल्फ़ेल नहीं बन सकेंगी। कुल्ल जीवों का बर्ताव एक क़िस्म का नहीं हो सकता। हर एक क़िस्म के जीवों की समझ-बूझ और करनी में फ़र्क़ रहता है, और उसी मुवाफ़िक़ उनके दरजे जुदे २ समझे जाते हैं, जैसे—उत्तम, मध्यम और निकृष्ट और नीच वग़ैरा।

८—सब जगह इसी तौर पर जीवों की कार्रवाई में दरजे हैं और थोड़ा-बहुत फ़र्क़ रहता है, चाहे परमार्थ का काम होवे या दुनिया का।

९—पर जो सब जीवों का, जो एक संगत या फ़िरक़े या गिरोह में शामिल हैं, मतलब और चाह एक ही है, तो सब के सब रल-मिल कर उस काम को करेंगे। और उस कार्रवाई में एक दूसरे का मददगार रहेगा। और आपस में उनकी, इस सबब से, प्रीत और प्रतीत भी मज़बूत और क़ायम होवेगी, क्योंकि सब का मतलूब यानी प्रिय पदार्थ एक ही है।

१०—जब कि परमार्थ में, और ख़ास कर, संतों के सत-संग में, सब सतसंगियों का इष्ट एक ही है, यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल को सब मानते हैं और उन्हीं के धाम में पहुँचने का सब का इरादा है, और इसी मतलब से सब कोई सतसंग और अभ्यास करते हैं, तो आपस में इन सब जीवों की, उसी तरह पर और उसी दरजे की, प्रीत होनी चाहिये जैसे कि दुनिया में बहिन-भाई और ख़ास बिरादरी में होती है और एक को, दूसरे की हर वक्त, में जिस क़दर बन सके, मदद और पक्ष करना चाहिये।

११—जो २ सच्चे परमार्थी हैं, वे तो आपस में ज़रूर उसी मुवाफ़िक़ बर्तेंगे जैसा कि ऊपर लिखा गया है। पर जो संसारी हैं, और किसी सबब करके परमार्थ में शामिल हो गये हैं, या जो कि अहंकारी और अपस्वार्थी हैं और जिनके परमार्थ की चाह बहुत थोड़ी है, उनसे इस क़ायदे के मुवाफ़िक़ नहीं बर्ता जावेगा, यानी उनके मन में पूरा २

प्यार और भाव कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में नहीं आवेगा। और न सतसंगी भाइयों में जैसी चाहिये प्रीत करेंगे। उनका बर्तावा सर्व-अंग में बहुत करके ऊपरी होगा। किसी की भी प्रीत उनके अंतर में जैसी चाहिये, नहीं धसेगी।

१२—अब, आम तौर पर यह बचन समझौती का कहा जाता है कि हर एक स्त्री और पुरुष को जो राधास्वामी मत में शामिल हैं, और आइन्दा होवें, मुनासिब और लाज़िम है कि परम पुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में सच्ची और गहरी प्रीत और प्रतीत करें, और सतसंग और अभ्यास करके उसको दिन २ बढ़ाते रहें। और सतसंगी भाइयों और सतसंगिनों में बहिन-भाई की सी प्रीत करें, और कुल्ल संगत को अपनी ख़ास और निज बिरादरी समझें और प्यार-भाव के साथ उनके साथ बर्तावा रक्खें। क्योंकि इनका संग बराबर दयाल देश तक रहेगा और संसारी भाई और बिरादरी का संग सिर्फ़ इसी ज़िन्दगी यानी जनम तक का है।

१३—सतसंगियों को चाहिये कि आपस में, एक दूसरे की कसरों पर नज़र न करें और जो किसी में कोई कुचाल मालूम पड़े, तो उसको प्यार के साथ एकान्त में समझा देवें। सतसंगियों या संसारियों में उसकी कसर या ऐब को प्रकट करके उसकी ग़ीबत में ज़ाहिर न करें, क्योंकि इसी

का नाम निंदा है और सतसंगी को इस ऐब से बचना चाहिये।

१४—जो किसी सतसंगी या सतसंगिन की भक्ति और प्रेम और अभ्यास की तारीफ़ सुने, तो उसकी ईर्षा करके मन में कुढ़ना या जलना नहीं चाहिये, और उसका मन में नुक़सान या बुराई चेतना या ख़्याल करना नहीं। बल्कि इस बात की चौंप अपने मन में लावे कि जैसी भक्ति और प्रीत उस सतसंगी या सतसंगिन की है, वैसी ही आप भी पैदा करे, ताकि इसकी भी तारीफ़ होवे।

१५—सतसंगी और सतसंगिन को जहाँ तक बन सके किसी में औगुन दृष्टि लाना नहीं चाहिये, क्योंकि उस शख़्स में चाहे वह औगुन होवे या नहीं, पर औगुन देखने वाले के मन में वह औगुन सही पैदा हो जावेगा, और उसको अभ्यास के समय गुनावन उठा कर सतावेगा। और जो ज़्यादा ख़्याल उसका जम गया, तो जगह २ उससे निंदा करावेगा। इसमें प्रकट नुक़सान औगुन देखने वाले का होवेगा। इस वास्ते यह आदत, जिस क़दर जल्दी बने, छोड़ना चाहिये। और जो कोई ऐसा औगुन किसी में मालूम पड़े कि जिसके सबब से कुल्ल संगत की बदनामी होती होवे, तो उसको एकान्त में, गुरु या साध या सतसंगी से, जो संगत का अफ़सर होवे, कह देना मुनासिब है, ताकि वह मुनासिब तौर पर बंदोबस्त उसका कर दे या इतनी एहतियात रखनी चाहिये

कि किसी का कोई ऐब जहाँ तक मुमकिन और मुनासिब होवे, आम में प्रकट न किया जावे।

१६—खुलासा यह है कि हर एक सतसंगी और सतसंगिन राधास्वामी मत को लाज़िम और मुनासिब है कि अपनी ताक़त के ब-मूजिब जो २ बचन कि उनके फ़ायदे के वास्ते कहे गये हैं उनको दिल और जान के साथ मानने और बर्तने में कोशिश करें। और जिस क़दर कि उनसे न माना जावे, उसी क़दर अपने में कसर समझें। और उसी कसर के दूर करने के वास्ते जतन और प्रार्थना करते रहें, और अपने अंतर में शरमाते और पछताते रहें, तो आहिस्ता २ एक दिन उनकी कसर दूर हो जावेगी और मेहर से उनकी रहनी और बर्तावा बचनों के मुवाफ़िक़ दुरुस्त हो जावेगा।

बचन ११

राधास्वामी मत केवल दया का मत है और इस मत में जीव का उद्धार सहज होता है

१—मालूम होवे कि जो राधास्वामी दयाल ने सुरत-शब्द मार्ग का उपदेश फ़रमाया है, और उसके अभ्यास को ऐसा सहज कर दिया है कि औरत और मर्द, लड़का,

जवान और बूढ़ा, आसानी से कर सकता है। पर इस काम में हमेशा दया की ज़रूरत है, क्योंकि जीव निहायत निबल और अज्ञान और भूलनहार है। इस वास्ते, जो अभ्यास और भक्ति के काम कि इससे बनवाने मंजूर हैं, वह सब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से बनेंगे। बग़ैर दया के जीव की ताक़त नहीं है कि यह अभ्यास निर्विघ्न और बराबर कर सके। लेकिन जीव को चाहिये कि उनकी दया के भरोसे अपना इरादा मज़बूत करके या हिम्मत बाँध कर कोशिश करे जावे।

२—इसी तरह जो जीवों को समझाया जाता है कि मन और इन्द्रियों को अपने बस में लाओ और संसार और भोगों की तरफ़ से हटा कर अंतर में शब्द और स्वरूप के आसरे लगाओ और आहिस्ता-आहिस्ता ऊँचे देश की तरफ़ चढ़ाओ, पर जो कि जीव जन्मान-जन्म और जुगान-जुग और अनेक वर्षों से माया के घेर में पड़ा हुआ है, और संसारियों के संग और भोगों के रसों में फँसा हुआ है, और अपने निज घर यानी सत्तपुरुष राधास्वामी देश की याद बिल्कुल भूल गया है, और उसके मन और इन्द्रियां का झुकाव बाहर की तरफ़ कुटुम्ब-परिवार और माया के पदार्थों में हो रहा है, और हर वक़्त उन पदार्थों की प्राप्ति के लिये जतन करता है, या उसी के ख़याल में लिपटा रहता है, इस सबब से जो कभी सच्चे परमार्थ के

बचन सुनता है, वह भूल जाता है। और जो जुगत कि मन और इन्द्रियों के क़ाबू में लाने के वास्ते बताई जाती है, वह ब-सबब दुनिया के ख़्यालों के भरे होने के, इसके मन में कम ठहरती है और दुरुस्ती से नहीं बन पड़ती। इस वास्ते इस काम को भी थोड़ी बहुत दुरुस्ती से करने के लिये दया दरकार है। और वह दया कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल जब २ और जैसा २ मुनासिब समझते हैं, करते रहते हैं। लेकिन जीव को चाहिये कि दुनिया और उसके भोगों से किसी क़दर बैराग रक्खे और फ़िज़ूल ख़्वाहिशें न उठावे।

३–संतों ने कहा है कि जब तक जीव की भूल और भरम किसी क़दर दूर न होवे, तब तक मुनासिब है कि सतसंग हर रोज़ एक बार या दो बार करता रहे। जो भाग से संत सतगुरु या साध का सतसंग मिल जावे तो बड़ी बात है, नहीं तो उनकी बानी और बचन का थोड़ा पाठ, हर रोज़ एक या दो बार, होशियारी के साथ, समझ २ कर करना चाहिये। उससे भी बहुत फ़ायदा होगा और भूल और भरम आहिस्ता २ कम होते जावेंगे। और जब २ मौक़ा मिले तो साल भर में एक या दो बार या दो या तीन वर्ष में एक बार, वास्ते कम से कम एक या दो हफ़्ते या ज़्यादा के, ज़रूर सतसंग में शामिल होवे और उस वक़्त जो कुछ कि अपने मन में संदेह और भरम होवें, उनको साफ़ करावे, और जो कोई और विघ्न अभ्यास

में हर्ज करते होवें, उनको भी दूर करावे।

४—यह सतसंग भी बिना दया के नहीं मिल सकता है। और राधास्वामी दयाल सच्चे परमार्थियों पर आप दया करके जब २ मुनासिब होता है, उनकी चाह पूरी करते हैं। यानी जब-तब मौज से ऐसा ब्यौंत बनाते हैं कि जिसमें वे सतसंग में शामिल होकर उससे फ़ायदा उठावें। और जो ऐसा ब्यौंत न बने तो सच्चे सतसंगी से उनका मेल करा कर परमार्थ के गहरे और रसीले बचन उनको सुनवाते हैं, कि जिस में उनके कारज का बनाव जारी हो जावे। लेकिन जीव को चाहिये कि सतसंग में शामिल होने के लिये सच्चे मन से चाह उठाता रहे, और जो बंदोबस्त इसके इख़्तियार में होवे, करता रहे।

५—सब जीव जैसा कि चाहिये अभ्यास या करनी नहीं कर सकते। इस वास्ते राधास्वामी दयाल ने ऐसी मौज फ़रमाई है कि जो जीव सच्चे होकर उनके चरनों की सरन लेवेंगे और अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ शौक़ के साथ करनी भी करे जावेंगे, यानी अपने कुल्ल काम परमार्थी और स्वार्थी उनकी मौज के आसरे करेंगे, तो वे उनकी हर तरह से सम्हाल और रक्षा फ़रमा कर जिस क़दर अभ्यास और करनी, वास्ते उनके उद्धार के, ज़रूर होगी, उनसे आप करा लेंगे, और आख़िर वक़्त पर उनको आप अपने चरनों की अमृत-धार में लपेट कर जिस

स्थान पर कि मुनासिब समझेंगे, ऊँचे ओर सुखाले देश में बासा देवेंगे और जो कुछ करनी, वास्ते पहुँचने धुर स्थान के, बाक़ी होगी, उसको, जीव को दुबारा जनम देकर और फिर सतसंग में शामिल करके, पूरी करावेंगे और इस तरह उसका कारज पूरा करेंगे।

६—खुलासा यह कि हर तरह कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल जीवों पर अपनी दया फ़रमा कर हर हालत में उनका गुज़ारा करते हैं और परमार्थ में ख़ास कर जो कोई उनकी सरन दृढ़ करके सच्चे मन से लेवेगा, उसके जीव का काम बनावेंगे, यानी उस का पूरा उद्धार करेंगे।

७—सच्ची सरन के धारन करने के वास्ते ज़रूर है कि गहरी प्रीति और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में होवे। और जब सतसंग करके मन में विश्वास आया और थोड़ा बहुत प्रेम जागा, फिर जिस क़दर कि अभ्यास इस जीव से आसानी के साथ बन पड़े, वही उसके उद्धार के वास्ते काफ़ी होगा। यानी राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से जिस क़दर करनी ज़रूरी और मुनासिब है, आप करा लेवेंगे, और जीव को दयाल देश में बासा देवेंगे।

८—राधास्वामी दयाल का हुक्म है कि जो कोई अपनी करनी पूरे तौर पर करके निज देश में पहुँचना चाहे, उसको चाहिये कि गहरा अभ्यास करे और मन

और इंद्रियों का रोक कर क़ाबू में लावे और सुरत को चढ़ा कर मुक़ाम २ पर पहुँचावे। तब एक दिन धुर धाम में पहुँचेगा। और ऐसी करनी वाले के संग दया बराबर रहेगी और वे दयाल अपना ख़ास सहारा देकर कारज बनावेंगे।

९—और जिन जीवों से कि इस क़दर मेहनत अभ्यास की, और कार्रवाई मन और इंद्रियों को रोकने और क़ाबू में लाने की, नहीं बन पड़ती है, पर सरन सच्चे मन से राधास्वामी दयाल के चरनों की धारन कर रहे हैं, उनको चाहिये कि प्रीति और प्रतीत चरनों में बढ़ाते रहें, और जिस क़दर और जैसा बने अभ्यास भी करे जावें। तब राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से उनके जीव का कारज आप बनावेंगे, जैसा कि इन कड़ियों में दया से आप फ़रमाया है।

धीरज धरो करो सतसंगत, मेहर दया से लेउँ सुधारा।
वह तो रूप दिखा कर छोड़ूँ, तुम जल्दी क्यों करो पुकारा।
तुम्हरी चिंता मैं मन धारी, तुम अचिंत रह धरो पियारा।
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती, और परतीत सँवारा।
यह करनी मैं आप कराऊँ, और पहुँचाऊँ धुर दरबारा।

और कबीर साहब ने भी अपनी बानी में ऐसा ही कहा है—

मत तू हंसा डिगमिगे, गहो मेरी परतीत।
काल मार मर्दन करूँ, ले चलूं भौजल जीत॥

१०—इस वास्ते जो जीव कि राधास्वामी दयाल का सरन में आये हैं, उनको चाहिये कि उनकी दया की प्रतीत और भरोसा दृढ़ करके, जिस क़दर कि उनसे बने, करनी करे जावें। बाक़ी काम जो कुछ होगा, राधास्वामी दयाल आप सँवारेंगे।

११—और मालूम होवे कि सरन लेने से यह मतलब नहीं है कि कुछ भी करनी न करें यानी न सतसंग और अभ्यास करें और न प्रीत और प्रतीत की तरक़्क़ी में कोशिश करें।

१२—जो जीव ऐसी समझ धारन करेंगे, उनको समझना चाहिये कि वे आलसी और बे-परवाह हैं, और दया के लेने की क़ाबलियत नहीं रखते और इस वास्ते जब तक वे हिम्मत बाँध कर अपनी कोशिश न करेंगे, तब तक उनके कारज का बनना भी शुरू नहीं होगा।

१३—जो कोई दरियाफ़्त करे कि बिना पूरी करनी कराने, और कर्मों के काटने के, राधास्वामी दयाल दया और मेहर से कैसे जीव का उद्धार करते हैं, तो जवाब उसका यह है कि—

क—वे अपनी दया से संचित और प्रारब्ध कर्मों को, उनका भोग जल्द २ कराके और फल उनका मन भर की जगह सेर भर में भुगता कर, बहुत से इसी जनम में कटवा देते हैं। और उन कर्मों का असर मन का सेर भर और सूली का कांटा इस तौर पर हो जाता है कि जीवों को उनके नाम के आधार और चरन सरन के भरोसे से तकलीफ़ बहुत कम व्यापती है। यानी ऐसी हालत में उनके मन और सुरत मौज से इस क़दर अंतर में खिंचे और तने रहते हैं कि दुख-सुख का असर उन पर ब-निस्बत संसारी जीवों के कम व्यापता है।

ख—क्रियमान कर्म का बंधन, सरन वाले जीवों को, बहुत कम या बिल्कुल नहीं होता है, क्योंकि जो काम कोई आसा धरके वे करते हैं, उसमें मौज को निहारते रहते हैं। और चाहे उनका मन मौज के साथ मुवाफ़िकत करे या न करे, वे अपनी मेहर से उन कर्मों के नतीजे यानी मतलब को इस तौर पर मोड़ देंगे कि जिसमें जीवों का परमार्थी फ़ायदा निकले, और दुनिया का भी काम जिस क़दर ज़रूरी और मुनासिब है, औसत दरजे पर बनता चला जावे और उनके मन का बंधन उसमें ज़्यादा न होने पावे, और सतसंग कराके जीवों के मन में से दुनिया की फ़िज़ूल चाहें और आसा और मन्सा घटाते चले जाते हैं। इस रीत से क्रियमान कर्म उनको बाँध नहीं सकते।

ग--जो मेहर से उन जीवों से भक्ति और प्रेम की करतूत जैसे सतसंग और सुमिरन और ध्यान और भजन और बानी का पाठ और संत और साध और प्रेमी जन की तन, मन, धन से सेवा कराते जाते हैं, इससे उनके मन और सुरत दिन २ माया और उसके पदार्थों से उपराम होते जाते हैं, यानी इन्द्रियों के घाट से हट कर दिन २ ऊँचे की तरफ़ चढ़ते हैं, और अंतर और बाहर दया और मेहर के परचे पाकर प्रीत और प्रतीत बढ़ती जाती है, और राधास्वामी दयाल के दर्शन और उनके धाम में पहुँचने की उमँग जागती जाती है।

घ--इस करनी के फल का कुछ हिसाब नहीं हो सकता यानी दिन २ उन जीवों का प्रेम बढ़ता जाता है और काल और कर्म और माया के घेर से उबार होता जाता है और संसारी चाह और करतूत दिन २ घटती जाती है और उसके भोग और पदार्थों से चित्त हटता जाता है।

१४—इस तौर से जीव के सच्चे उद्धार और उबार में किसी तरह का शक और संदेह बाक़ी नहीं रहता। और जो जीव कि सच्चे परमार्थी हैं और राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं, वह ऊपर की लिखी हुई बातों की जाँच कर सकते हैं, और अपनी हालत दिन २ बदलती हुई, कुछ अरसे के अभ्यास के बाद, देख कर और राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की परख करके, निश्चय इस

बात का कर सकते हैं कि ज़रूर सुरत-शब्द मार्ग का, जिस क़दर बन सके, अभ्यास करके और राधास्वामी दयाल के चरनों की सरन दृढ़ करके उनके जीव का सच्चा कल्याण और उद्धार मुमकिन है।

१५—राधास्वामी मत में कोई काम जब्र और कठिनता के साथ नहीं कराया जाता। जिस क़दर कार्रवाई कि जारी है, सब सहज तौर पर कराई जाती है। किसी चीज़ का ज़बरदस्ती त्याग नहीं कराया जाता, और न किसी बात को ज़बरदस्ती मनवाया जाता है, और न कोई काम ताक़त से ज़्यादा कराया जाता है। जिस क़दर जिसकी उमंग है, उसी क़दर वह कार्रवाई करता है। ख़ुलासा यह कि कुल्ल कार्रवाई परमार्थ की इस मत में जीवों की सरधा और उमंग और शौक़ और प्रेम पर मुनहसर है।

१६—सच तो यह है कि ऐसा ऊँचा और सच्चा और पूरा मत और ऐसा गहरा और धुर पहुँचाने वाला अभ्यास, आज तक कहीं और किसी वक़्त में, ऐसी आसानी के साथ जैसी कि अब राधास्वामी दयाल ने कर दी है, प्रकट नहीं हुआ। इस मत में कुल्ल जीव, कुल्ल क़ौमों और मुल्कों के, शामिल हो सक्ते हैं और उसके अभ्यास की कमाई थोड़ी-बहुत करके राधास्वामी दयाल की दया लेकर, सहज में, बग़ैर ज़्यादा मेहनत और तकलीफ़ के, इसी जनम यानी

ज़िन्दगी में अपनी मुक्ति और उद्धार का सबूत पाकर, थोड़ी बहुत शान्ति और आनन्द और निर्चिंताई हासिल कर सकते हैं।

१७—यह मत और यह अभ्यास कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने आप संत रूप धारन करके इस दुनिया में प्रकट किया। और जो कि वे कुल्ल रचना के सच्चे माता-पिता हैं और सब जीवों का हित उनको बराबर मंजूर है, इस वास्ते यही मत और यही अभ्यास कुल्ल जीवों के वास्ते जारी फ़रमाया। यानी कुल्ल मुल्कों के जीव इस में शामिल होकर सहज में इसकी कार्रवाई और कमाई करके अपना उद्धार करा सकते हैं।

१८—जो कोई सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थ के हैं, उनको यह बचन प्यारा लगेगा, और वे, सतसंग अंतर और बाहर करके जो २ बातें कि ऊपर लिखी गई हैं, उनकी जाँच और राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की परख करके, मगन होवेंगे। और जिनके मन में खोज और दर्द नहीं है, वे इस बचन की प्रतीत नहीं करेंगे। और वे न तो सतसंग में शामिल होकर और बचन सुन कर खुश होंगे और न अंतर में अभ्यास कर सकेंगे। फिर उनको जाँच और परख कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और दया की कि जो वे जीवों पर कर रहे हैं, कैसे हो

सकती है ? और फिर राधास्वामी मत और उसके अभ्यास की बड़ाई का यक़ीन कैसे हो सकता है ?

१६–जिस किसी ने, एक या दो या ज़्यादा बार सतसंग करके राधास्वामी मत को अच्छी तरह समझ लिया है, और संशय और भरम उसके दूर हो गये हैं, और निश्चय उसका और सरन राधास्वामी दयाल के चरनों में पक गई है और भक्ति मार्ग यानी परमार्थ के क़ायदे और रीत अच्छी तरह समझ लिये हैं और उसके मुआफ़िक़ जिस क़दर बनता है, बरताव भी करता है और अपने मन और इन्द्रियों की चाल की निरख-परख करके बचनों के मुआफ़िक़ उनकी सम्हाल और सफ़ाई में कोशिश करता रहता है, और अभ्यास जहाँ तक मुमकिन है, राधास्वामी दयाल की दया लेकर दुरुस्ती से करता है, और जो विघ्न उसमें ख़लल डालते हैं उनको परख कर, उनके दूर करने का जतन जैसा कि मुनासिब है, करता है, और अंतर और बाहर थोड़ी-बहुत मेहर और दया राधास्वामी दयाल की अपने ऊपर परखता है, उसको ज़्यादा ज़रूरत सतसंग में आने की नहीं है। क्योंकि उसको बानी और बचन के पाठ और अंतर के अभ्यास और बचनों के मनन और विचार से वह फ़ायदा हासिल हो सकता है, जो सतसंग में प्राप्त होगा। लेकिन जब उसका दिल चाहे और मौक़ा मिले तब उसको इख़्तियार है कि सतसग में शामिल होकर उसका

आनन्द और बिलास हासिल करे।

२०—जो लोग कि बहुत दूर देश में रहते हैं, उनको चाहिये कि एक बार तो जब और जैसे मौक़ा मिले, ज़रूर सतसंग में शामिल होवें। और जो यह मुमकिन न होवे तो उन सतसंगियों का, जो एक या दो बार सतसंग में शामिल हो चुके हैं, सतसंग करके, अपने संशय और भरम दूर करावें और प्रीत और प्रतीत चरनों में राधास्वामी दयाल के बढ़ावें, और पोथी सार बचन वग़ैरा को समझ २ कर अकसर पढ़ते रहें।

बचन १२

चेत कर सतसंग और अभ्यास करके परमार्थी चिन्ता और खटक हिरदे में पैदा करना कि जिससे पूरा काम बन जावे

१—जो कि राधास्वामी मत कुल्ल मालिक से मिलने और उसके धाम में बासा पाने का मत है, इस वास्ते इसके रक्षक, और जो जीव कि सच्चे मन से इस में शामिल होवें, उनके सम्हालने वाले, और धुर घर में पहुँचाने वाले, राधास्वामी दयाल आप हैं। बिना उनकी मेहर के कोई जीव इस मत में सच्चा होकर नहीं लग सक्ता और

न दुरुस्ती से कार्रवाई उसके अभ्यास की जारी रह सकती है।

२—जो जीव कि सतसंग में आवें और बचन चित्त देकर बिना पक्षपात सुनें और अपनी विद्या बुद्धि और चतुराई को पेश न करें, तो थोड़े दिन के सतसंग करने में, यह मत उनकी समझ में अच्छी तरह आ सकता है और संदेह और भरम दूर हो सकते हैं। तब, जो जीव कि सच्चे खाजी और दर्दी हैं और दुनिया का हाल देख कर उनके मन में किसी क़दर बैराग आया है, वे, राधास्वामी दयाल की बानी और बचन सुन कर ज़रूर मगन होंगे, और अंतर में सतसंग का रस लेकर तृप्त होते जायेंगे। ऐसे जीवों को राधास्वामी दयाल अपने सतसंग में लगावेंगे और रास्ते का भेद और जुगत चलने की दरियाफ़्त करके वे जीव अभ्यास शुरू कर देंगे।

३—लेकिन, जो जीव कि अधिकारी यानी सच्चे दर्दी नहीं हैं, वे जो इत्तिफाक़ से सतसंग में आ भी जावेंगे, तो पक्षपात अपने ख़ानदानी मत की नहीं छोड़ेंगे, और बचन उलटे-सुलटे कह कर संतों के बानी और बचन को अच्छी तरह नहीं समझेंगे, और एक, दो या तीन बार सतसंग में आकर बैठ रहेंगे, और बाहर निकल कर अपनी ओछी बुद्धि और मत के मुवाफ़िक़ संत मत की निंदा करेंगे। ऐसे जीव सतसंग में लगाने के लायक़ नहीं हैं।

पर उनके मन में भी बीजा पड़ जावेगा और किसी न किसी वक़्त जब उनके कर्मों का भार किसी क़दर हलका हो जावेगा, तब वह बीजा अंकुर पैदा करेगा। यानी वे जीव फिर सतसंग में आवेंगे और होशियारी के साथ बचन सुन कर मानेंगे, और थोड़ा बहुत अभ्यास भी उनसे बन पड़ेगा।

४—सच्चे परमार्थी जीव जो सतसंग और अभ्यास में लगाये गये हैं, उनकी प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में और सुरत शब्द-मार्ग की कमाई में दिन २ बढ़ती जावेगी। यहाँ तक कि मन और इन्द्रियों के भोग उनको कम प्यारे लगेंगे, और आलस और नींद और भूख आहिस्ता आहिस्ता कम होती जावेंगी और गुरु-दर्शन और सतसंग और प्रेमी जन में प्यार बढ़ता जावेगा, और राधास्वामी नाम और राधास्वामी दयाल के चरन उनके हिरदे में किसी क़दर बस जावेंगे। ऐसे जीवों को राधास्वामी दयाल अपनाते हैं, यानी उनकी रक्षा और सम्हाल हर दम मंज़ूर है, और अंतर और बाहर उनको परचे मेहर और दया के मिलते जावेंगे।

५—फिर उन्हीं जीवों की सरन राधास्वामी दयाल के चरनों में दृढ़ और मज़बूत होती जावेगी। और वे ही जीव अपने मन और इन्द्रियों के हाल और चाल की निरख और परख दुरुस्ती से कर सकेंगे, और ना-मुनासिब और

ग़ैर वाजिब ख़्वाहिशें संसार की, उनके मन में, कम उठेंगी और जब २ उठेंगी तो फ़ौरन उनको वे रोकेंगे और हटावेंगे। और जब कभी भूल-चूक कर, या पुरानी आदत और स्वभाव के मुवाफ़िक़, ऐसी चाहों में कभी २ बह जावेंगे, तो जल्द होशियार होकर अपनी हालत पर झुरेंगे, पछतावेंगे और शरमावेंगे, और प्रार्थना करेंगे। और उस दिन कुछ भजन और ध्यान ज़्यादा करेंगे ताकि जो नुक़सान और हर्ज, मन और इन्द्रियों की कुचाल से, हुआ है, उसकी सम्हाल हो जावे।

६—फिर आहिस्ता २ उन जीवों की ऐसी हालत होती जावेगी कि उनको झीना यानी बारीक ख़्याल, परमार्थ यानी राधास्वामी दयाल के चरन कँवल का, थोड़ा-बहुत हर वक़्त रहेगा और अपनी हालत की परख और जाँच हर रोज़ करते रहेंगे और दिन २ बचनों के मुवाफ़िक़ अपने मन और इन्द्रियों की दुरुस्ती और सफ़ाई और सम्हाल करते जावेंगे, और मन और सुरत को समेट कर ध्यान और भजन के वसीले से आहिस्ता २ निज घर की तरफ़ चढ़ाते जावेंगे।

७—अब समझना चाहिये कि जब तक कोई सतसंगी इस तौर पर कि जैसा ऊपर लिखा है, चेत कर सतसंग करके, अभ्यास में थोड़ी-बहुत मेहनत दुरुस्ती के साथ नहीं करेगा, और सतसंग में अच्छी तरह निर्णय करके राधास्वामी